Chapter-5

पंचम परिच्छेद

नयी कविता : भाषा का आलंकारिक वर्ण्य वैचित्र्य

भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा में अलंकारों का महत्वपूर्ण स्थान है। भाषा की चमत्कृति के आधायक तत्व के रूप में अलंकारों का विवेचन प्राचीन काल से होता चला आया है। अलंकारों की महत्ता भाषा की श्रीवृद्धि के रूप में प्राय: सभी आचार्यों ने स्वीकार की है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अलंकार की व्याख्या देते हुए अपने मंतव्य को इस प्रकार स्पष्ट किया- 'वस्तु या व्यापार की भावना को चटकीली करने और भाव को अधिक उत्कर्ष पर पहुंचाने के लिए कभी किसी वस्तु का आकार या गुण बहुत बढ़ा कर दिखाना पड़ता है, कभी उसके रूप-रंग या गुण की भावना को उसी प्रकार के और रूप-रंग मिलाकर तीव्र करने के लिए समान रूप और धर्म वाली और वस्तुओं को सामने लाकर रखना पड़ता है। कभी-कभी बात को घुमा-फिराकर कहना पड़ता है। इस तरह भिन्न-भिन्न विधान और कथन के ढंग को अलंकार कहा है।'[१] संक्षेप में अलंकार सादृश्य या साधर्म्य की योजना द्वारा अनुभूति के विषयों को अधिकाधिक ऐन्द्रिय और मूर्तरूप में उपस्थित करके उस सम्बद्ध अनुभूति को तीव्रता प्रदान करते हैं, और यह सर्वथा सही है कि अनुभूति ऐन्द्रिय-संवेदनों और बिम्बावली के बिना संभव नहीं है।[२] वस्तुत: अलंकार कथन की भंगिमाओं का ही नाम है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृश्य मूलक अलंकारों के बिना अनुभूतियों का बिम्बन प्राय: असम्भव है।

इन अलंकारों का प्रयोग प्राय: भाषा में चमत्कार की सृष्टि के लिए होता है। जब रचनाकार भावों एवं विचारों को सीधी-सादी भाषा

में अभिव्यक्त करने तथा पाठक एवं श्रोता तक सम्पूर्ण रूप से सम्प्रेषित करने में असमर्थ पाता है तब वह अलंकारों का सहारा लेता है। भाषा तात्विक दृष्टि से अलंकारों की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि भाषा में प्रेषणीयता की शक्ति बढ़े, जिससे श्रोता भावों को बिना किसी कठिनाई के ग्रहण कर सके। शुक्ल जी के अनुसार- 'अलंकार भाषा की बाह्य एवं आन्तरिक क्षमताओं का एक विशेष प्रकार का उपयोग है जिससे काव्य का कथ्य अधिक सम्प्रेष्य, प्रभावशाली एवं आकर्षक बन जाता है।'[3] डा० रामकुमार वर्मा ने अलंकारों के प्रयोग में पांच बातों को महत्वपूर्ण बताया है वे हैं 'भाषा की परिष्कृत सृष्टि, नादमय संसार की परिव्याप्ति, चमत्कार प्रणवता, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण, भावतीव्रता अथवा वस्तु जगत में प्रच्छन्न भाव को विभिन्न दृष्टि से उभारकर गति प्रदान करना।'[4] भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप, गुण, क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में कभी- कभी होनेवाली उक्ति अलंकार है।[5] शुक्ल जी ने कभी- कभी का प्रयोग करके यह कहना चाहा है कि कभी- कभी कविता अलंकार विहीन भी हो सकती है। मम्मट ने भी कहा है कि -' क्वचिदस्फुटालंकार विरहेऽपि न काव्यत्व हानि:'[6] कभी-कभी अलंकार के न होने पर भी काव्यत्व की हानि नहीं होती।' अलंकार केवल वाणी की सजावट के लिए नहीं वे भावों की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णता के लिए आवश्यक उपादान है। वे वाणी आचार- व्यवहार, रीति-नीति, पृथक स्थितियों के पृथक स्वरूप, भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के भिन्न-भिन्न चित्र हैं। वे वाणी के हास, अश्रु, स्वप्न, पुलक हाव-भाव हैं।------ जहां- जहां भाषा की जाली केवल अलंकारों के चौखटे फिट करने के लिए बुनी जाती है, वहां भावों की उदारता शब्दों की कृपण जड़ता में बंध कर सेनापति के दाता और सूम की तरह इकासार हो जाती है।[7]

पन्त जी के मत से स्पष्ट है कि उन्होंने अलंकारों के निरर्थक प्रदर्शन को हेय माना है तथा भावों की अभिव्यक्ति के लिए अत्यन्त सहायक तथा आवश्यक भी माना है। अलंकारों के प्रयोग से यदि अभिव्यक्ति में जड़ता आ जाये तो वहां अलंकार अवश्य त्याज्य है। कविता में ऐसी स्थिति तब आती है जब कवि घिसे-पिटे शब्दों तथा उपमानों का प्रयोग करता है। कुशल कवियों की अभिव्यंजना में अलंकारों के प्रयोग से नयी स्फूर्ति तथा ताजगी आ जाती है जिससे सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है, सूक्ष्मता तथा प्रभावोत्पादकता आती है। वाच्य रूप में प्रयुक्त अलंकार प्रभावी नहीं होते, लेकिन जब वे व्यंजित होते हैं तो वे अधिक प्रभावी तथा जीवंत होते हैं।

मध्यकाल के कवियों की तरह नयी कविता के कवियों ने अलंकारों को केन्द्र में रखकर काव्य रचना नहीं की न वे आलंकारिक भाषा के पक्षपाती ही रहे। नयी कविता में समूचे अवयवों से युक्त अलंकार नहीं मिलते, उनके कुछ कटे-पिटे हिस्से मिलते हैं, कुछ पंक्तियां मिलती हैं, अलंकारों का छायाभास मिलता है, कहीं-कहीं उपमा और रूपक, तो कहीं रूपक और उत्प्रेक्षा, तो कहीं विभावना और विशेषोक्ति अलंकारों की संकर संसृष्टि मिलती है। विसंगति और विरोधाभास की ओर से इन कवियों ने अपनी उक्ति को धारदार बनाने का प्रयास किया है। शमशेर की विभावना और विशेषोक्ति का यह छायाभास-

बात बोलेगी हम नहीं
भेद खोलेगी बात ही
सूना-सूना पथ है, उदास झरना
एक धुंधली बादल रेखा पर टिका हुआ आसमान
जहां पर वह काली युवती हंसी थी।[8]

नयी कविता जीवन की कविता होने के नाते उसमें समूचा व्यक्तित्व है ।[६] मानव मन की पीड़ा की सच्ची अभिव्यक्ति हुई है । आधुनिक वैज्ञानिक बोध के कारण आज जो बिखराव है, सब कुछ टूटा हुआ है, आज के व्यक्ति का व्यक्तित्व खण्डित व्यक्तित्व है, तो कविता ही कैसे समूची हो सकती है । कविता के इस बिखराव का उसके तत्वों और उपादानों पर भी गहरा छाप पड़ता है । परन्तु जब तक काव्यात्मकता नहीं होती, तब तक उसे कविता नहीं कहा जा सकता । नयी कविता इससे पूर्णतय: सक्षम है । परन्तु यह सत्य है कि आज की कविता में पूरा-पूरा अलंकार ढूंढना लगभग बेमानी है । किन्तु नयी कविता को पूर्णत: अलंकार साहित्य से अलग भी नहीं किया जा सकता । धर्मवीर भारती ने अनुभूति को उदात्त और सम्प्रेषणीय बनाने के लिए अपेक्षित कलात्मक अभिव्यक्ति की शर्तों को स्वीकार किया है -

'दो मुझे शब्द, दो रसानुभव, दो अलंकरण ।
मैं चित्रित करूं तुम्हारा करुण रहस्य मरण ।[१०]

यद्यपि यह पूरी तरह नहीं कहा जा सकता कि नई कविता में अलंकार है ही नहीं । सच्चाई और ईमानदारी से शोधने पर बहुतायत अलंकारों की श्रृंखला गुंथी हुई मिलती है । उसका अलग-अलग विवेचन करना नयी सूझ-बूझ के साथ अलंकारों की पंगति में बिठाना सहृदय विचारक का कर्तव्य होता है । नयी कविता में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अपह्नुति, अन्योक्ति, विभावना, विशेषोक्ति, दृष्टान्त, विशेषण-विपर्यय, मानवीकरण, विरोधाभास आदि अलंकारों के अच्छे खासे उदाहरण मिल जाते हैं । 'संशय की एक रात में' जहां-जहां अनुभूति में भंगिमा है, वहां अनायास ही कोई न कोई अलंकार उभर कर आया है । उपमा तो नरेश मेहता की अनुभूति और अभिव्यक्ति का

kalpana's

मानों एक नैसर्गिक तत्व है । `मिथिला के आम्रकुंजों पर झुके हुए फाल्गुनी आकाश की उपमा एक नील हंस से दी गयी है ।[११] अशोक वृक्षों की उपमा मुकुटों से दी गयी है ।[१२] मेरी यात्रा। छोटे शंख सी यहीं बालू में कहीं गिर खो गयी ।[१३] पैरों के चिल्लों से अंकित बालू तट` की उपमा `विकल्पों से खुंदे मन` से दी है । भारती ने धृतराष्ट्र की मोहान्धता के कारण प्रजा को रुग्ण बनाने वाली विकृति ग्रस्त मर्यादा की उपमा जनता को अपने सम्पर्क से रोगी बनाने वाली गलित अंग वेश्या से दी है । `शब्द यह लोहे की सलाखों सा मेरी पसलियों में धंसता है ।[१४] प्रस्तुत कविता में उपमा के साथ ही अनुप्रास और मानवीकरण का भी समावेश हुआ है -

मुग्धनील नलिनी से अपने
नयनों से
ओ रात !
नखत-नीहार-धुला उजला दुलार
कब दोगी ? कब ?[१५]

यहाँ रात के नयनों की उपमा `मुग्ध नील नलिनी` से दी गयी है । अज्ञेय की कविता में कहीं- कहीं तो बहुत ही सुन्दर ~~रूप-को~~ रूपकों का सृजन हुआ है । भोर और अहेरी को लेकर खड़ा किया गया सांग रूपक बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा है ।[१६] सर्वेश्वर के भोर, कलरात, संध्या का श्रम, और काफी हाउस में मैलोड्रामा,` आदि शीर्षकों से लिखी कविताओं में रूपकों का बहुत प्रयोग मिलता है । सर्वेश्वर के रूपकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे सामाजिक जीवन से उद्भूत हैं और हमें गहरे स्तर तक प्रभावित करते हैं ।

'कल रात जाने कैसी हवा चली
विवेक का पीले सांध्य फूलों वाला
पेपर वेट
खिसक कर गिर पड़ा
दर्द के दबे हुए पृष्ठ
उड़-उड़कर बिखर गये ।

\+ + +

बेचैन थकी हुई रात
मेरी पसलियों पर
कोहनियां गड़ाये बैठी रही
और दर्द के बिखरे हल्के पृष्ठों
को। धीरे-धीरे नत्थी करती रही
सुबह होते ही। आकाश की
नीली पिन कुशल खाली थी-
तारों की एक एक आलपीन चुक गयी थी[67]

इनमें विवेक को पेपर वेट, दर्द को पृष्ठ, रात को पृष्ठों को नत्थी करने वाली, तारे की आलपीन और तारों मेंस आसमान को पिनकुशल कहा गया है । इस प्रकार सर्वेश्वर की कविता 'भोर ' का रूपक बड़ा ही मार्मिक है । अम्बर के सिदोरे पर सलमे सितारों के कामवाली, नीली मखमल का खोल चढ़ा हुआ था । सिदोरे के उलटते ही उसका सारा सिंदूर गिरि-तरु के शिखरों से ढर-ढर कर धरती और नदियों में फैल जाता है । ग्राम्या मुग्धा के श्रृंगार को देखकर वृक्ष के कोटरों में रहने वाली पक्षिणियां रूप सखी खिल-खिलाकर हंसती हुई इधर-उधर चहकती फिरती हैं । सूरज प्रेमी चुपके से

Kalpana's

हाथ बढ़ाकर उसके माथे पर चांदी की बिंदिया चिपका देता है।[१८] प्रातः पूर्व दिशा में घटित होने वाले परिवर्तनों की सूचना देनेवाला यह रूपक बड़ा मार्मिक एवं सटीक है।

जगदीश गुप्त ने भी रूपकों और मानवीकरण के सहारे प्रकृति की सुन्दर छटा प्रतिच्छादित किया है -

बादलों की झील के ऊपर -
खिला शिखरों का कमल-वन।
भोर ने भर-मूठ कुंकुम किरन- केसर
इस तरह फेंकी -
वनों के गहन पुरइन पात सारे
रंग उठे
ज्योति की बहुरंग, भिलमिल मछलियां
झील के तलहीन बादल नीर में
बहुत गहरे, बहुत गहरे, तिर गयी -[१९]

दूसरे उदाहरण में कवि ने सिन्दूर से पुते हुए आकाश में बादल- व्याल का चुपके से सरकना बतलाया है। बादल व्याल की लपलपाती जिह्वा विद्युत है। जो तुहिन-शिखरों पर बेसुध सोयी तथा स्वप्न में डूबी सूर्य की अवशिष्ट किरण को चाट जाने की तैयारी में है। रूपक सुन्दर है और हृदयस्पर्शी है।[२०]

नरेश मेहता की 'दिनांत की राजभेंट' कविता में भी इसी प्रकार के

Kalpana's

रूपक मिलते हैं । किरन-धेनुएं, नामक कविता में क्षितिज से अवतरित होने, किरणों को गायों से तथा प्रभात को ग्वाला से उपमित किया गया है जिसमें सांग रूपक है -

उदयाचल से किरन-धेनुएं
हांक ला रहा वह प्रभात का ग्वाला
पूंछ उठाये चली आ रही
क्षितिज जंगलों से टोली
दिखा रहे पथ इसी भूमिका
सारस सुना-सुना बोली
गिरता जाता फेन मुखों से
नभ में बादल बन तिरता
किरन धेनुओं का समूह
यह आया अंधकार चरता ।[२१]

नरेश मेहता के (उषस्) शीर्षक से लिखी गयी कविता में सफल रूपकों के प्रयोग हुए हैं ।[२२] गायों, ग्वालों, भेड़ों और बकरियों का रूपक नरेश बड़ा प्रिय है ।[२३] कहीं पर 'गगन' गड़रिया भेड़ें चराता है तो कहीं सूरज ग्वाला किरणों की गायों को घेरता है और कहीं धुएं की चिड़िया धरती का धान चरती है ।[२४]

जगदीश गुप्त की 'लोहार' शीर्षक कविता में आया रूपक भी बड़ा सुन्दर है । रूपक में भोर का वर्णन किया गया है । चांद की निहाई पर

Kalpana's

रात भर घनों की चोट पड़ती रही, जिससे चिनगारी छिटक-छिटक कर तारों के रूप में आसमान में फैलती रही तथा अंधकार के लोहार का पसीना ओस की बूंदों के रूप में टपकता रहा । प्रात:कालीन वेला में पूरब की भट्ठी से सूरज का लाल-लाल दहकता गोला निकल आया --

चांद की निहाई पर
एक के बाद एक
लगातार घन चलते रहे
आवाजों की तीखी चोटें दिशाओं को गुंजाती रहीं-
तारों की चिनगारियां
छिटक-छिटक कर
सारे आसमान में फैलती रही
पसीने की बूंदें -
झुट-पुटे में ओस को कौन देख पायी
भोर के बलिष्ठ हाथों ने
पूरब की भट्ठी से लाल-लाल
-दहकता गोला निकला
पर वह निकलते ही रात की लम्बी काली
- संड़ासी से छूट गिरा
गिरते ही लुढ़क चला पश्चिम की ओर
अंधेरे के लोहार ने लाचार
सुबह से ही अपनी दूकान बढ़ा दी
ताजी हवा की ठंडी सांस भरते हुए ।[२५]

kalpana's

भारत भूषण अग्रवाल ने चांदनी के सौन्दर्य को रूपायित करने के लिए एक नया आयाम प्रस्तुत किया है, रूपक के कथन का यह एक नया तरीका है -

मार बिजली की कटारी
मर गये बादल
टपकते खून से धरती नहायी
रंग गया लोहित क्षितिज का आसमान
और फिर
उनके अमर उत्सर्ग का प्रतिदान बनकर
दीखने लग गयी हीरों से जड़ी वह चांद की कुर्सी
अचानक भर गया सब शून्य
तारों की रूपहली गद्दियों से
चमक जिनकी डाल जग पर
मोह का रजता वरण
अब करेगी राज सारी रात[२६]

नयी कविता में उपमा और रूपक के पश्चात् उत्प्रेक्षा मानवीकरण, अपह्नुति, रूपकातिशयोक्ति आदि अलंकारों के प्रयोग मिलते हैं। अज्ञेय ने 'उमड़-उमड़ आते हैं, अविश्रान्त ये अशमित प्रेत तोड़कर मानों द्वार नरक कारा के?[२७] में नरक-कारा के द्वार तोड़ने की क्रिया की उत्प्रेक्षा द्वारा मूल क्रिया के वेग को तीव्रता प्रदान की गयी है। अज्ञेय की कविता 'चांद भागा जा रहा है' में उत्प्रेक्षा का बड़ा ही सुन्दर उदाहरण बन पड़ा है।[२८] अज्ञेय के अतिरिक्त भारती, कुंवर नारायण, नरेश और माथुर आदि ने उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया है। कुंवर नारायण ने रात को उत्प्रेक्षा अलंकार के

माध्यम से चित्रित किया है, जिसमें सितारे मानों कुंडली मारे हुए सर्प हों, ज्योतिस्नात रत्न हों, अंधेरे में बिन्दुओं के रूप में चमचमा रहे हों —

अंधेरे कुन्तलों में
लहर खाती रात
मानों सर्प लाखों कुंडली मारे
सितारे, रत्न ज्योतिस्नात
चुप तिमिर में चम चमाते बिन्दु[29]

मानवीकरण अलंकार का प्रयोग भारती, कुंवर नारायण , शकुन्तला माथुर, अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, नरेश मेहता की कविताओं में मिलता है। भारती के अंधायुग में - 'काल घूमा करता है', तथा 'एक अर्द्ध सत्य ने युधिष्ठिर के, मेरे भविष्य की हत्या कर डाली है' में क्रमशः काला और अर्द्धसत्य का मानवीकरण हुआ है[30] कुंवर नारायण की 'ओस न्हायी रात' का मानवीकरण द्रष्टव्य है —

ओस न्हायी रात
गीली सकुचती आशंक
अपने अंक पर शशि ज्योति की संदिग्ध चादर डाल
देखो -
आ रही व्योम गंगा से निकल
इस ओर
झुरमुट में संवरने को दबे पांवों

कि उसको यों अव्यवस्थित ही
कहीं आँखें न मग में घेर लें
लोलुप सितारों की[31]

शकुन्तला माथुर ने पूर्णमासी की रात का `मानवीकरण नायिका के रूप में किया है।[32] गिरिजा कुमार माथुर के `रात` `संध्या` `चांदनी` और `वर्षा` के मानवीकरण बड़े ही प्रभावशाली हैं। वर्षा का नारी रूप में किया गया वर्णन सहज ही आकर्षित कर लेता है। सद्यस्नाता नायिका की भांति उसकी गीली अलकों से पानी की बूंदें चू रही हैं —

गीली अलकों से वारि बूंदें चुआती हुई
भीनी भोलियों से मुक्त-मुक्ता लुटाती हुई
कोयला-सा श्यामल स्वर
भीगी अमराई से आता है पल-पल भर,
सुरमीली आंखों को ढांक रही श्याम अलक
सांवली वदलियों का उड़ता-सा घूंघट पट
छिपता-सा इन्दुवदन जाता है झलक-झलक
उठती नत चितवन जब हल्की सी विद्युत बन[33]

इसी प्रकार `अभी तो झूम रही है रात, कविता में रात्रि का मानवीकरण हुआ है।[34] नायिका ने आंखों में काजल आंज रखा है, जिससे उसकी लज्जाशीला प्रकृति का भी पता चलता है। रात भर जागने से उसकी अलकें बिखर गयी हैं।

`रात` को मस्ती और खुमारी में डूबी नायिका के रूप में चित्रित

करके माथुर ने सुन्दर और सूक्ष्म कल्पना का परिचय दिया है। धर्मवीर भारती ने घाटी का मानवीकरण रतिश्रांता नायिका के रूप में किया है। 'नितान्त कुमारी घाटी' कामातुर मेघ के आलिंगन में पिस कर रतिश्रांता के समान मलिन हो गयी है।

'प्रात धूप की जरतारी ओढ़नी लपेटे
अभी- अभी जागी
खुमार से भरी
नितान्त कुमारी घाटी
इस कामातुर मेघ धूम के
औचक आलिंगन में पिसकर
रतिश्रांता सी मलिन हो गयी।[३५]

नयी कविता में अपह्नुति अलंकार के भी उदाहरण यत्र-तत्र मिलते हैं। धर्मवीर भारती के अंधायुग में बादल नहीं हैं, ये गिद्ध हैं, में अपह्नुति अलंकार है।[३६] यहां उपमेय का निषेध करके उपमान की स्थापना की गयी है-

'क्षमा करें महाराज'
हम केवल घटना हैं
इतिहास नहीं-[३७]

'सूर्य कोई शिला नहीं है तपस्या है अग्नि की', में भी अपह्नुति अलंकार है।[३८] अज्ञेय और माथुर ने भी इसका पर्याप्त प्रयोग किया है।

क्रौंच बैठा हो कभी बल्मीक पर। तो मत समझ
वह अनुष्टुप बांचता है संगिनी के स्मरण में
जान ले वह दीमकों की टोह में है।[39]
सुनो कवि भावनाएं नहीं है सोता
    भावनाएं खाद हैं केवल[40]

भारत भूषण अग्रवाल ने भी अपह्नुति अलंकार के बड़े अच्छे प्रयोग किए हैं।[41] रूपकातिशयोक्ति अलंकार में उपमान से ही काम चलाया जाता है। उपमेय का कथन नहीं होता। नरेश मेहता की निम्नलिखित पंक्तियों में रूपकातिशयोक्ति और व्यतिरेक अलंकार का एकत्र प्रयोग हुआ है --

'दे न पाये छांह
हम जिस हंसिनी को
हमसे श्रेष्ठ तो वे गाछ हैं।[42]

यहां कवि ने उपमेय सीता का निगरण करके केवल उपमान 'हंसिनी' द्वारा उसका बोध कराया है, इसलिए यहां रूपकातिशयोक्ति है, इसके साथ यहां छाया देनेवाले गाछों (उपमान को राम उपमेय की अपेक्षा उत्कृष्ट बताए जाने के कारण यहां व्यतिरेक अलंकार भी है। 'शंख, सीपी, उगलते, ये कुछ फन वृहदाकार' में[43] कुछ फन वृहदाकार उपमान के द्वारा उपमेय लहरों का बोध कराया जाने के कारण रूपकातिशयोक्ति अलंकार है। इसके अतिरिक्त मदन वात्स्यायन[44] और दुष्यन्त कुमार[45] की कविताओं में रूपकातिशयोक्ति अलंकार के उदाहरण मिलते हैं। यदि अनेक क्रियाओं का एक ही कारक हो तो कारक दीपक कहलाता है।

" अपने इन हाथों से
मैंने उन फूलों-सी बहुओं की कलाइयों से
चूड़ियां उतारी हैं,
अपने इन आंचल से
सिन्दूर की रेखाएं पोंछी हैं । [४६]

\+ + + +

" ये पट्टियां गान्धारी की आंखों पर हैं, सैनिकों की जख्मों पर हैं। [४७] में भीर कारक दीपक अलंकार है । इसके अतिरिक्त नयी कविता में विशेषण-विपर्यय और ध्वननशीलता (आनोमैटो पोइया) आदि अलंकारों को भी गति मिली है । अंधी संस्कृति, नरभक्षी गिद्धों का भूखा बादल , भूखे पंजे, कायर -हत्या में विशेष विपर्यय का सफल प्रयोग मिलता है । खड़-खड़-खड़ कर उठे ताड़, में ध्वननशीलता का समावेश है । [४८] वस्तुत: नयी कविता में प्रयुक्त सभी अलंकार कथन की नयी ताजगी के साथ आये हैं और उन्हीं अलंकारों का प्रयोग हुआ है जिनसे काव्य में चारुता की सृष्टि होती है ।

२- अलंकारों में निहित अभिव्यक्ति विधान तथा नयी कविता के कथन की नयी भंगिमाएं :

'अनन्ता हि वाग्विकल्पा:' ध्वनिकार के इस कथन का यही अभिप्राय है कि कथन की अनन्त भंगिमाएं हैं जिस प्रकार वृक्षों की शाखाओं, डालियों में अनेक टहनियां उगती रहती हैं उसी प्रकार वाणी के गर्भ से कथन की अनन्त भंगिमाएं फूटती रहती है । अलंकार इन्हीं कथन की भंगिमाओं का ही एक रूप है और इनकी भी शब्दार्थमय रूप में हजारों शाखाएं हैं । आचार्य शुक्ल के अनुसार 'वस्तु या व्यापार की भावना को चटकीली करने और भाव को

kalpana's

अधिक उत्कर्ष पर पहुंचाने के लिए कभी किसी वस्तु का आकार या गुण बहुत बढ़ाकर दिखाना पड़ता है, कभी उसके रूपरंग या गुण की भावना को उसी प्रकार के और रूप रंग मिलाकर तीव्र करने के लिए समान रूप और धर्मवाली और-और वस्तुओं को सामने लाकर रखना पड़ता है। कभी- कभी बात को घुमा-फिराकर कहना पड़ता है। इस तरह के भिन्न-भिन्न विधान और कथन के ढंग को अलंकार कहते हैं।[४९] उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृश्यमूलक अलंकारों के बिना अनुभूतियों का बिम्बन प्राय: असम्भव है। नयी कविता में अलंकारों से मेल खाती हुई जिन नयी भंगिमाओं को प्रयोग में लाया गया वे - उपमान, बिम्ब एवं प्रतीकों के माध्यम से सच्ची अभिव्यक्ति देने में समर्थ रहीं। अर्थालंकार के समस्त भेद उपमा के ही प्रपंच हैं। बिम्ब एवं प्रतीक अलंकारों की सीमा का अतिक्रमण करनेवाले उपादान हैं।

ये पाश्चात्य काव्य सम्पदा की देन है, प्रतीक, अन्योक्ति, समासोक्ति, रूपकातिशयोक्ति आदि अलंकारों से मेल खाता है परन्तु जबरन इसे अलंकारों में समाहित कर देना नूतन काव्य पद्धति के साथ अन्याय होगा। उपमेय और उपमान भारतीय काव्यशास्त्र के महत्वपूर्ण अस्त्र हैं। उपमान वह अप्रस्तुत है जो किसी एक वस्तु की रूप, गुण, प्रभाव आदि की स्थिति को अधिक स्पष्ट करने और उसमें काव्योत्कर्ष दिखाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इस प्रकार वह उपमा और सादृश्य मूलक अलंकारों, बिम्ब एवं प्रतीक से सीधा सम्बन्ध रखता है। 'उपमा' का कार्य संस्कृत साहित्य में बहुत ही उपयोगी साबित किया गया है। भरत, रुय्यक, राजशेखर, अप्पय दीक्षित और पण्डित राज जगन्नाथ आदि आचार्यों ने उसे अलंकारों का मूल और सर्वस्व बताया है। उपमा ही अनेक अलंकारों का बीज है। वही अनेकानेक अलंकारों का मूल है।[५०] राजशेखर ने उपमा की विशिष्टता

एवं व्यापकता पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि 'उपमा' अलंकारों की मुकुट मणि है। वह कवि वंश की अर्थात् समस्त काव्य संपदा की जननी है।[५१] अप्पय दीक्षित के अनुसार 'काव्य रूपी नृत्यशाला में उपमा रूपी नटी चित्र भूमिका के भेद से अनेक रंग रूपों में आकर नाचती हुई काव्य मर्मज्ञों का मनोरंजन करती है।[५२]

अप्पय दीक्षित का यह कथन अलंकारों में उपमान की व्यापकता का ही दस्तावेज है। पंडितराज जगन्नाथ ने उपमान योजना को सुन्दरता, सरसता चमत्कार और विषय बोध का आधायक तत्व माना है।[५३] उपमानों का क्षेत्र केवल समता मूलक अलंकारों तक ही सीमित नहीं है प्रत्युत विषम एवं अतिशय मूलक अलंकारों तक फैला हुआ है। पाश्चात्य साहित्य शास्त्र में उपमा की अपेक्षा रूपक को व्यापकता प्रदान की गयी है। हरबर्ट रीड ने सभी अलंकारों के मूल में रूपक का निवास स्वीकार किया है।[५४] इसी प्रकार जे० एम० मरे ने भी रूपक की व्यापकता पर प्रकाश डाला है, उनका कहना है कि 'जब कोई कवि रचना में संक्षिप्तता लाना चाहता है तब उसे रूपक का सहारा लेना पड़ता है। समानता या तुलना का कार्य रूपक से ही संभव है। किन्हीं दो वस्तुओं में सादृश्य के निमित्त रूपक का आयोजन सहज ही स्वीकार्य हो जाता है।[५५] भारतीय साहित्य शास्त्र के अनुसार सभी अलंकारों के मूल में उपमा का निवास है। उपमानों की सरणि समस्त अलंकारों को अपने अन्दर समाहित करने में सक्षम है इसलिए नयी कविता के तत्व विवेचकों ने उपमानों को नाभीय बिन्दु मानकर काव्य भाषा के आलंकारिक पक्ष पर जोर दिया है। अलंकार भावों के उत्कर्ष में सहायक होनेवाली वस्तु है। भावों की तीव्रता उपमान के माध्यम से ही संभव है। उपमान को एक सादृश्यमूलक अलंकार का विधान कहा जा सकता है। परन्तु नयी कविता

की उपमान योजना उस रूप में प्राप्त नहीं होती जिसका लक्षण ग्रन्थों के आधार पर विवेचन किया जा सके । उपमान योजना के अन्तर्गत प्रस्तुत और अप्रस्तुत दो पक्ष होते हैं इसी को उपमेय और उपमान पक्ष भी कहा जाता है । प्रस्तुत पक्ष की चारुता, सुन्दरता और उसकी भावोत्कर्षता का निर्द निदर्शन करने के लिए जिस पक्ष को अपनाया जाता है वही अप्रस्तुत पक्ष अथवा उपमान विधान कहलाता है यह प्रकार का साम्यमूलक अलंकार का विधान पक्ष है ।

भाषा की अप्रस्तुत योजना : नयी कविता के नये उपमान :

कविता की भाषा साधारण भाषा की अपेक्षा अन्य ही हुआ करती है । अर्थ क्षेत्र में `अन्य` शब्द से अप्रस्तुत अथवा उपमान ही लिया जाता है । `उपमान` को अप्रस्तुत, अप्रकृत अथवा अवर्ण्य भी कहते हैं । इसके विपरीत जिसका हम वर्णन कर रहे हों वह उपमेय, प्रस्तुत, प्रकृत या वर्ण्य कहलाता है । प्रस्तुत जीवन से सम्बन्धित कोई भी वस्तु या तथ्य होता है जो काव्य का आधार स्तम्भ बनता है । इसे काव्य का विभाव पक्ष भी कहते हैं जिसे आलम्बन बनाकर कवि अपनी कल्पना की सीढ़ी खड़ा करता है । संसार के स्थूल-सूक्ष्म, सुन्दर-असुन्दर, भौतिक-आध्यात्मिक, भीषण-शाश्वत सभी पदार्थ इसके अन्तर्गत आ जाते हैं । इस अप्रस्तुत विधान को काव्य का कल्पना पक्ष भी कहते हैं । प्रस्तुत की तरह अप्रस्तुत की भी कोईसीमा नहीं होती, वह भी प्रस्तुत की तरह मूर्त-अमूर्त, स्थूल-सूक्ष्म बन सकता है । कई बार किसी सुन्दर व्यक्ति या वस्तु को देखकर हमारा हृदय खिल उठता है और उसके लिए समानार्थी अप्रस्तुत अपने आप निकल पड़ते हैं । डा० विजयेन्द्र स्नातक का विचार है

कि 'अप्रस्तुत योजना या उपमान योजना काव्य का प्राण तत्व है। इससे काव्य में रसार्द्रता, प्रभ विष्णुता, प्रेषणीयता और मर्मस्पर्शिता का संचार होता है -- कवि जितना ही भाव प्रवण और सहृदय होगा उसकी अप्रस्तुत योजना उतनी ही मार्मिक और अखण्ड आनन्द का स्रोत होगी।' [५६]

उपमानों का मूलाधार साम्य होने के नाते वे सादृश्य, साधर्म्य, और प्रभाव साम्य पर आधारित होते हैं। भाव एवं व्यंजन प्रवणता की जिम्मेदारी उपमानों पर ही आकृत होती है। आचार्य शुक्ल का कथन है कि 'हमारे यहां साम्य मुख्यत: तीन प्रकार से माना जाता है - सादृश्य(रूप या आकार का साम्य) साधर्म्य (गुण या क्रिया का साम्य) और केवल शब्द साम्य (दो भिन्न वस्तुओं का एक ही नाम होना) इनमें से अंतिम तो शब्द क्रीड़ा दिखाने वालों के काम का है, रहे सादृश्य और साधर्म्य विचार करने पर इन दोनों में प्रभाव साम्य मिलेगा। [५७]

प्राचीन काल से चले आते हुए भक्ति एवं रीति युग के अप्रस्तुत जब घिस-पिट गये तब उसकी यथेष्ट अभिव्यंजकता और प्रेषणीयता जाती रही। छायावादी कवियों ने अध्यात्म सौन्दर्य एवं सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने के लिए नया अप्रस्तुत विधान ढूंढ निकाला। यही बात नयी कविता के साथ भी घटित हुई। नयी कविता में उपमान योजना का क्षेत्र जितना ही जन-जीवन के निकट आता गया उसी के साथ वाचक शब्दों का लोप धीरे-धीरे होता गया। इस प्रकार उपमान योजना के अन्तर्गत दो तत्व उभर कर आये - प्रथम जीवन और जगत के भौतिक तत्व तथा दूसरे वाचक

शब्दों का लोप अलंकार उक्ति वैचित्र्य के पुराने प्रयोगों के प्रति दुराग्रह बढ़ने लगा ।

नयी कविता के कवियों ने कविता को सजाने-संवारने, पल्लवित -पुष्पित करने के अतिरिक्त अपने अन्दर के कुलबुलाते सत्य को उद्घाटित करने का प्रयास किया और सफलता भी हासिल की । उन्हें सब कुछ नया चाहिए, नए शब्द चाहिए, नए उपमान चाहिए । पुराना उन्हें बिल्कुल ग्राह्य नहीं है । पुराने उपमानों के लिए स्पष्ट कहा गया है कि चांदनी चन्दन सदृश हम क्यों लिखें[५८] कोई जरूरी है कि मुख हमें कमलों के ही समान दिखायी दें । नयी कविता की उपमान योजना में मानव जीवन के यथार्थ उपकरणों, मानसिक भावों, विकारों को सम्प्रेषित करने की अपूर्व क्षमता है । मुख्यतया नये कवियों के लिए पहले के उपेक्षित उपमान अत्यन्त ग्राह्य हैं । आज का कवि किसी सुन्दरी प्रेमिका के मुख को कमल, चन्द्रमा से उपमा देने में सहमत नहीं है । वह बैंगन और बिजली के स्टोव से उसकी उपमा देता है —

मेरी प्रेयसी का मुख बैंगन जैसा गोल,[५९]
'प्यार का नाम सुनते ही बिजली के स्टोव सी
सुर्ख हो जाती है ।'[६०]

'मेरा सपना टूट गया जैसे भुना हुआ पापड़'

आज का ~~कवि~~ नया कवि सद्-असद् उपकरणों को उपमान बनाकर किसी के गुण-दोषों को उभारता है, किसी की खिल्ली उड़ाता है, किसी

पर व्यंग्य कसता है, किसी की प्रशंसा करता है तो किसी को उपदेश देता है। आज के कवि का हृदय सूना या उथला नहीं है बल्कि बदलती हुई परम्परा के साथ काव्य-प्रवृत्तियों में भी बदलाव आवश्यक है। पुरानी काव्य प्रवृत्तियों के साथ कविता में प्रयुक्त अप्रस्तुत विधान भी मैला - कुचैला दिखायी देता है। अर्थात् इन पुराने अप्रस्तुतों का चमत्कार मर गया है। अज्ञेय का कहना है कि बदलती हुई काव्य-सम्वेदना के साथ इन मैले, उपमानों का मेल किस प्रकार किया जा सकता है --

अगर मैं तुमको
ललाती साँझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता
या शरद के भोर की नीहार न्हायी कुंई
टटकी कली चम्पे की
वगैरह तो
नहीं कारण मेरा हृदय उथलाया कि सूना है
या कि मेरा प्यार मैला है
बल्कि केवल यही
ये उपमान मैले हो गये हैं।[६१]

घिसे-पिटे उपमानों और प्रतीकों से धूमिल काफी क्षुब्ध दिखायी देते हैं। आज जबकि देश में चारों ओर अराजकता फैली है, आगजनी, लूट-पाट, हुल्लड़, चीख-चिल्लाहट है, इन विसंगतियों के कारण सम्पूर्ण जीवन आग बन चुका है तो उसके लिए वैसी भाषा भी चाहिए, पुरानी-हल्की

भाषा बदलती हुई रस काव्य संवेदना को वहन करने में कामयाब नहीं हो सकती । इस प्रकार हलकी-फुलकी भाषा में मानव जीवन की सच्चाई और अनुभूतियाँ बांधना तितली के पंखों में पटाखा बांधना है ।[62] धूमिल ने इन घटिया किस्म के उपमानों और प्रतीकों की खाल उधेड़े बिना नहीं रहते -

बढ़िया उपमा है,
'अच्छा प्रतीक है,
हैं हैं हैं । हैं हैं हैं । ।'
'ठीक है - - - - ठीक है'[63]

इस प्रकार प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत की अनन्तता एवं नित्य नवता के कारण काव्य का भी अनन्त और नित्य नया हो जाना स्वाभाविक है । किन्तु यह आवश्यक है कि प्रस्तुत कैसा भी क्यों न हो उस पर कवि का अप्रस्तुत विधान और कल्पना ऐसी बने कि पहले ही पाठक को पूर्ण बिम्ब ग्रहण करा दे । श्रोता एवं पाठक के हृदय में भी प्रस्तुत के सौन्दर्य, आकार, गुण, क्रिया-व्यापार, समष्टि का वैसा ही चित्र खींच दे । जो प्रस्तुत को देखकर कवि के मन में खिंचा हो ।

उपमान काव्य में प्रमुख रूप से दो कार्य करते हैं - भाव व्यंजना और वस्तु व्यंजना । जिस प्रकार जीवन के अनेक रूप हैं और सृष्टि के अनन्त बिम्ब हैं, जीवन के इन्हीं रूपों की सौन्दर्य परक दृष्टि के लिए कवि उपमान का आश्रय लेता है इस प्रकार उपमान के तीन भेद हुए -

१- परिवेशगत उपमान, (२) भाषा गत उपमान (३) अलंकारगत उपमान ।

सादृश्य के आधार पर इन्हें चार भागों में बांटा जा सकता है - (१) मूर्त के लिए अमूर्त उपमान, (२) अमूर्त के लिए मूर्त उपमान (३) मूर्त के लिए मूर्त उपमान (४) अमूर्त के लिए अमूर्त उपमान । स्रोत के आधार पर इन्हें छः भागों में बांटा जा सकता है - (१) प्राकृतिक उपमान (२)ऐति-हासिक उपमान (३) पौराणिक उपमान (४) धार्मिक उपमान (५) वैज्ञानिक उपमान (६) दैनंदिन जीवन के उपमान । वस्तुत: इतिहास, पुराण, धर्म, समाज, प्रकृति, विज्ञान, मनोविज्ञान और राजनीति आदि इन नवीन उपमानों के स्रोत हैं ।

प्राकृतिक उपमानों के प्रयोग में अज्ञेय, धर्मवीर भारती, मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर, भारत भूषण अग्रवाल, नरेश मेहता और स्व० सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का प्रमुख हाथ है । `मुक्ति बोध का हृदय जब भावुकता से पसीज उठता है तो कहना ही क्या ? उनका लोक- सौन्दर्य रमणीय उपमानों के सहारे खिलने लगता है । लोक जीवन के जीते-जागते चित्र उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं के सहारे उभर कर सामने आ जाते हैं —

`फुर-फुर-फुर-फुर वह नीम हंसा चिड़िया बोली
फर-फर आंचर तुमको निहार मानो कि मातृभाषा बोली
जिससे गूंजा यों घर आंगन,
खनके मानो वहुओं के चूड़ी- कंगन,
मैं जिस दुनिया में आज बसा जन संघर्षों की राहों पर

ज्वालाओं से माओं का, बहनों का, सुहाग सिन्दूर हंसा-
बरसा- बरसा,
इन भारतीय गृहिणी निर्भरणी नदियों केहु
घर-घर में मूखे प्राण हंसे ।[६४]

नयी कविता के कवियों ने प्रकृति के माध्यम से नारी के स्वस्थ चित्र, दृष्टिफलक रूप में प्रस्तुत किए -

> अर्चना की धूप सी तुम गोद में लहरा गयी
> ज्यों फरे केशर तितलियों के भार से[६५]

ऐसे ही ये मेघ क्वांर के यही चांद कहता था। मुफको आंख मार के। अजी तुम्हारा मैं हूं साथी। जीवन भर इसी धुली चांदनी में तुम । खेला करना खेल प्यार के।[६६] अमरायी में दमयन्ती सी। पीली पूनम कांप रही है ।[६७] कहीं- कहीं प्रकृति से लिए गये उपमान प्राय: व्यक्तिगत मन की टूटन, तकलीफ और निराशा को अभिव्यक्त करते हैं । और कहीं- कहीं प्रकृति के बहुत ही सुन्दर रंगीन चित्र उभारते हैं ।[६८]

४ पौराणिक उपमानों के प्रयोग धर्मवीर भारती, जगदीश गुप्त और गिरिजाकुमार माथुर ने बड़ी ही कुशलता से किये हैं । नरेश मेहता भी पौराणिक उपमानों के प्रयोग में आगे हैं ।

पाण्डवराज के काले कुत्ते सी। पीछे-पीछे पूंछ दबाये आखिर कब तक संग निभायेगी तू मेरा। ओ मेरी परछाईं मेरा साथ छोड़ दें ।[६९]

~~कलेजा~~

कलेजा चीर दूं। इन हिरण्य कश्यप सदृश। विद्युत निवेशित नीरदों का ।[७०] हरिनारायण व्यास ने नारियों की चीख-पुकार को द्रौपदी से उपमित किया है ।[७१] धार्मिक उपमानों के प्रयोग में धर्मवीर भारती जितने कायल हैं उतना नई कविता में कोई नहीं कवि ने तुलसी दल जैसे उपमानों को चुनकर एक नयी ख्याति अर्जित की -

`जिस दिन तुमने फूल बिखेरे माथे पर
अपने तुलसी दल जैसे पावन ओठों से
जिस दिन तुमने मेरी सांसों को चूमाये
भगवान राम के मंत्र बाण-सी
सात सितारों में जाकर टकरायी थी ।[७२]

भारती ने `प्रार्थना की कड़ी` कविता में सद्यस्नाता नायिका का चित्रण धार्मिक उपमानों के आधार पर बड़े ही सहज भाव से किया है, नायिका नहाकर निकली है, केश कंधों पर बिखरे हैं ऐसी स्थिति में अर्चना की धूप उसके शरीर का स्पर्श कर रही है, और उसका सरल, निष्काम रूप पूजा के समान पवित्र लगता है —

प्रात: स्वयस्नात
कंधों पर बिखरे केश
आंसुओं में ज्यों
घुला वैराग्य का सन्देश

चूमती रह- रह
वदन को अर्चना की धूप
यह सरल निष्काम
पूजा सा तुम्हारा रूप[७३]

कनुप्रिया में भी ऐसे धार्मिक उपमानों का प्रयोग कवि ने बड़े ही सहज भाव से किया है। गिरिजाकुमार माथुर के 'धूप के धान' और 'शिला पंख चमकीले' काव्य संकलनों में धार्मिक उपमानों का प्रयोग हुआ है। धूप को चंदन रेख से उपमित कर कवि ने पावनता और निर्मलता का भी सहज ही परिचय दे दिया है।[७४] ऐतिहासिक उपमानों का प्रयोग भी नयी कविता में मिलता है। गिरिजाकुमार माथुर, नरेश मेहता, मदन वात्स्यायन आदि ने शुद्ध ऐतिहासिक रूप में किया है। आदम का पुत्र बहुत। भटका अंधेरे में। चंगेजी न्यायों के। खून भरे पैरों में[७५] अमराई में दमयन्ती -सी। पीली पूनम कांप रही है।[७६] हम सब इतिहास के गलियारों में। विजयी सिकन्दर से टहल रहे।[७७]

नयी कविता के कवियों ने अधिकांशतय: विज्ञान, टेक्नोलाजी, ज्यामितीय उपमानों का इस्तेमाल किया है। वैज्ञानिक उपकरणों और उसकी अनेक उपलब्धियों से इन कवियों ने अभिव्यंजना के फाटक खोले हैं। वैज्ञानिक उपमानों का प्रयोग सर्वेश्वर, भारत भूषण अग्रवाल, मुक्ति बोध, रघुवीर सहाय, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी आदि ने बड़े ही कुशलता से किए हैं -

कैमरे के लेन्स-सी है आंखें बुझी हुई
बिगड़े कम्बख्त लाउड स्पीकर से
जिनके मुख निश्शब्द खुले हैं।[७८]

सर्वेश्वर ने जिस प्रकार `थर्मामीटर` में पारा चढ़ता-उतरता है उस प्रकार नायिका के मन में भावनाएं चढ़ती-उतरती हैं का चित्र खींचा है ।[७९] सर्वेश्वर ने मधुर उतार-चढ़ाव से काम करने वाली नायिका के घूमने और गाने को रिकार्ड के समान बताया है उसकी जवानी मादकता और खुमारी को `क्लोरोफार्म` का एक मीठा नींद भर झोंका है -

अपने सपनों की सुई- तले
किसी रेकार्ड - सी
जो स्वयं घूमती है, गाती है,
जिसकी जवानी
खुद जिसके लिए `क्लोरोफार्म` का
एक मीठा नींद भरा झोंका है ।[८०]

प्यार के नाम पर नायिका को गुस्सा आता है और वह बिजली के स्टोव सी लाल-लाल हो जाती है ।[८१]
कैमरे के लैंस-सी है आंखें बुझी हुई। बिगड़े कम्बख्त लाउड स्पीकर से। जिनके मुख निश्शब्द खुले हैं । दांतेदार पहिए सा दिल घूमता है । टाइप राइटर `की` तरह सबके पैर बारी-बारी उठते हैं ।[८२] में उपमानों का सुन्दर समायोजन है । इसके अतिरिक्त नयी कविता के कवियों ने दैनंदिन जीवन, घर-गृहस्थी, चूल्हा-चौका, रीति- रिवाज, खान-पान, प्रणय, निराशा, यौनभाव, हर्ष-भाव से सम्बंधित उपमानों का सुन्दर समायोजन किया है । धूप के लिए जो अमूर्त है, वह उपमान बड़ा ही प्रभावशाली और स्वाभाविक लगता है ।[८३]
वत्सल छाती सी पहाड़ियां। दूध पिलाने आतुर। बच्चे-सा सूरज सो जाता। लेकर मुंह में आंचरा।[८४]

गरम-गुलाबी शरमाहट सा हल्का जाड़ा। स्निग्ध गेहुंए गालों पर कानों तक चढ़ती लाली जैसा फैल रहा है।[८५] हृदय की गति जब संघर्ष के थपेड़ों से मंद- सी होने लगती है, तब वह टिम-टिमाती-सी चेतना का प्रकाश फेंकता है। इसी भाव की अभिव्यंजना के लिए टिम-टिमाती ढिबरी का उपमान मुक्ति बोध ने प्रयोग किया है।[८६] मुक्ति बोध भयानक उपमानों के पुल बांधने में तथा ज्यामितीय उपकरणों को उपमान बनाने में बहुत ही सक्षम हुए हैं - कटे हुए वणित की तिर्यक रेखा सा। चोर की गठरी सा, भूसे-सा, काले-मेघ सा, अचानक आसमानी फासलों से चतुर संवाददाता चांद ऐसे मुस्कराता है, फुस-फुसे पहाड़ों सी पुरुषों की आकृतियां, भुस-भुसे टीलों सी नारी प्रकृतियां, टीन के कनस्तर सी दिल में हड़बड़ी मचाया करते हैं, ठण्डे नक्षत्रों सी आंखें, भूतों की शादी में कनात से तन गये। दुःखों के दागों को तमगों सा पहना, भागती है चप्पल चटपट आवाज चांटों सी पड़ती, सितारे आसमानी छोर फैले हैं अनगिनत दशमलव से। खूबसूरत मैगजीन पृष्ठों सी। खुली थी, नंगी सी नारियों के, उघरे हुए अंगों के, विभिन्न पोजों में, लेटी थी चांदनी। सफेद अण्डर वीयर सी। संस्कृति के कुहरीले धुंए से भूतों के गोल-गोल मटकों से चेहरों ने।[८७]

अभिव्यंजना चातुर्य लाने के लिए नयी कविता के कवियों ने भाषागत उपमानों का सहारा लिया है। ज्यों- ज्यों अभिधेय अर्थ रूढ़ हो जाता है, त्यों-त्यों कवि लक्षणा की ओर बढ़ता है और ज्यों-ज्यों लक्षणा अभिधा की कोटि में आती जाती है त्यों-त्यों कवि व्यंजना की ओर उन्मुख होता है। इसके लिए नयी कविता के कवियों ने विशेष के लिए सामान्य का प्रयोग,

जाति वाचक के लिए जाति वाचक संज्ञा का प्रयोग, गुण वाचक संज्ञा के लिए उसके गुण का प्रयोग बड़े ही सहज रूप में किया है। इसके अतिरिक्त प्रतीकात्मक, लाक्षणिक, विरोध विशेषण मूलक आदि उपमानों का प्रयोग इन कवियों ने किए हैं। सन् साठ के बाद नये कवियों का दौर बदला- विविध स्वर फूटने लगे। इन कवियों ने रोजगार, अव्यवस्था, शासन और राशन, घेराव, आन्दोलन आदि को उपमित करने के लिए विकृत उपमानों का सहारा लिया। कवि समाज में रहता है, समाज की अव्यवस्था एवं फूहड़पन को उभारना उसका फर्ज और ईमानदारी है। इन कवियों के व्यंग्य भरे बाण से घायल इंसान तिल-मिलाता और किच-किचाता है। इनके जहरीले शब्द कभी- कभी टीस भरी टंकार पैदा करते हैं। जैसे किसी पहाड़ी जंगली बिच्छू ने डंक मार-मार कर घायल कर दिया हो। इनकी अभिव्यंजना के कटीले तार बिजली के करण्ट से प्रवाहित होकर जकड़ लेते हैं, इनकी चोट से इंसान फल्ला उठता है। वास्तव में रचनाकार भोगे हुए सत्य की अभिव्यक्ति करता है, मात्र अभिव्यक्ति ही नहीं, गंदगी, फूहड़पन, कुरूपता, विद्रूपता के बीच सुगन्ध और स्वच्छता के माध्यम से उसे अर्थवान बनाता है। इन कवियों में धूमिल, राजकमल चौधरी, लीलाधर जगूड़ी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, पुरुषोत्तम खरे, श्रीकान्त वर्मा, सव्यसाची, कैलाश वाजपेयी, डा० विनय, राजीव सक्सेना, सुरेन्द्र तिवारी, नीलाभ ऋतुराज, चन्द्रकांत देवताले, श्याम परमार आदि प्रमुख हैं। मुक्ति बोध की तरह धूमिल के उपमानों में भी वैसी ही राग रंगत है। मेरे लिए वसंत। बिलों के भुगतान का मौसम है। मेरा गुस्सा जनमत की चढ़ी हुई नदी में एक सड़ा हुआ काठ है। लन्दन और न्यूयार्क के घुण्डीदार तश्मों से डमरू की तरह बजता हुआ। मेरा चरित्र अंग्रेजी का आठ है। उनकी जांघों की हरकत पाला लगी मटर की तरह मुरझा गयी है। बार-बार उनकी कविताओं में बवासीर

की तरह शब्द लहू उगलते हैं, मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है। दर असल जनतन्त्र अपने यहां एक तमाशा है। जिसकी जान मदारी की भाषा है। दर असल ये कवि किसी बिम्ब, प्रतीक या साज-बाज में बंधने के पक्षपाती नहीं हैं, वे सीधी, सहज भाषा में अपनी आवाज सड़क से संसद तक पहुंचाना चाहते हैं।

मगर मैं जानता हूं कि मेरे देश का समाजवाद मालगोदाम में लटकती हुई उन बाल्टियों की तरह है, जिस पर आग लिखा है, और उसमें बालू और पानी भरा है। 9

प्रयोगवादी कवियों की तरह पौराणिक, धार्मिक, प्राकृतिक उपमानों की साज-सज्जा इन कवियों में बहुत कम है, हां दैनंदिन जीवन से सम्बन्धित उपमानों की बहुलता अवश्य है। लीलाधर जगूड़ी बीड़ी और बीवी के बीच माचिस की तरह बजते हैं, ये शब्द को गोलियों की तरह महत्व देते हैं, आजादी एक जूठी थाली है।

३- पूर्ववर्ती अलंकारों की सीमा का अतिक्रमण करती हुई कथन की नयी भंगिमाएं:

अभिव्यक्ति के क्षेत्र में कल्पना तीन रूपों में प्रकट होती है - उपमान, बिम्ब एवं प्रतीक। उपमान विधान का विवेचन 'अलंकारों में निहित अभिव्यक्ति विधान तथा नयी कविता के कथन की नयी भंगिमाएं' में किया जा चुका है, बिम्ब और प्रतीक न तो पूरी तरह अलंकारों की सीमा में आते हैं और न उनसे कटकर अलग ही हुए हैं। यदि हम इन्हें अलंकार कहना चाहें तो कौन सा कहें ? बिम्ब को यदि शब्द चित्र, अर्थचित्र और ~~प्रतीक~~ प्रतीक को व्यंग्य रूपक, अध्यवसित रूपक, रूपकातिशयोक्ति, समासोक्ति, अप्रस्तुत प्रशंसा अथवा अन्योक्ति आदि अलंकारों के अन्तर्गत समाहित करने का प्रयास करें तो इन सत्ताधारी परिबलों के साथ जबरदस्ती ही कहे जायेगी। यद्यपि इन परिबलों के अलंकार होने के काफी सबूत जुटाए जा सकते हैं। बिम्ब और प्रतीक को पाश्चात्य काव्य शास्त्र के बिम्बवाद एवं प्रतीकवाद नामक काव्यान्दोलनों से अब व्यापक प्रतिष्ठा मिल चुकी है। उपमान उपमा का ही एक अंग है और वही अपने ताजे रूप में बिम्ब और पुराने रूप में प्रतीक बन जाता है। जब वह देखता है कि बिम्ब घिसकर प्रतीक बन गया है यानी नये और ताजे अर्थ का सन्दर्भ गायब हो गया है। तब वह फिर से जीवन और जगत के बीच नये अर्थ बोध की साधना करता है और नये रूप में उसकी संवेदना बिम्ब रूप में प्रकट होती है। बिम्ब का निश्चित अर्थ होना उसका पतन है, जो प्रतीक रूप में प्रकट होता है।[८८] बिम्ब विधान कला का क्रिया पक्ष है जो कल्पना से उत्थित होता है, कला जगत में कल्पना के विकास की एक सरणि है, कल्पना से बिम्ब का आविर्भाव होता है और बिम्बों से प्रतीक का। जब कल्पना मूर्त रूप धारण करती है तब

बिम्बों की सृष्टि होती है, और जब बिम्ब प्रतिमति या व्युत्पन्न अथवा प्रयोग के पौन: पुन्य से किसी निश्चित वर्ग में निर्धारित हो जाते हैं तब उनसे प्रतीकों का निर्माण होता है। अत: कला विवेचन की तात्त्विक दृष्टि से बिम्ब कल्पना और प्रतीक का मध्यस्थ है।[८६] जहां पर बिम्ब एक प्रकार का शब्दगर्भी चित्र है वहीं पर उपमान अर्थगर्भी विन्यास। 'बिम्ब कोई भी मानसिक व्यापार, विचार, घटना, अलंकार दो वस्तुओं की तुलना कुछ भी हो सकता है।[९०] स्टीफन ब्राउन का मत है कि-'व्यंजक शब्द ही प्रतीक होते हैं, और उससे घटित भाषा चित्रात्मक हो जाती है,'... चित्रात्मक भाषा अपनी व्यंजना से ऐसे बिम्ब बनाती है, जिनमें शब्द, अर्थ, वर्ण्य, विषय और रसिक चेतना सबकी अखण्डता अनुभूति गोचर होती है।[९१] एच कुम्बे बिम्ब को एक 'फिगर आफ स्पीच' मानते हैं, और इस दृष्टि से उन्होंने बिम्ब के दो भेद माने हैं - संक्षिप्त बिम्ब(केन्साइज) और श्लथ बिम्ब(लैज इमेज)।[९२] अलंकार बिम्ब योजना के सहायक उपकरण हैं, वे अनुभूति को गोचर और मूर्त रूप में उपस्थित करते हैं। नंद दुलारे वाजपेयी के अनुसार-'आधुनिक युग में जिसे हम बिम्ब विधान कहते हैं वही मुख्यत: अलंकारों की वस्तु है। काव्य में बिम्ब योजना अव्यक्त को व्यक्त रूप प्रदान करती है।[९३] प्रतीकों का प्रयोग उपमेय को अधिक भाव व्यंजक बनाने के लिए किया जाता है, प्रतीक और उपमान में इस दृष्टि से सूक्ष्म अन्तर है उपमान अथवा अप्रस्तुत किसी सौन्दर्य को चित्रित करने के लिए प्रयुक्त होता है, जब कि प्रतीक पूरे सन्दर्भ को स्पष्ट करता है। वह कौवे सा है, में वर्ण की श्यामता की तुलना है पर यह कहना 'वह कौवा है' में कौवे की चतुरता, चालाकी, दुष्टता आदि अनेक सन्दर्भ जुड़ते हैं। इस प्रकार प्रतीक का प्रभाव मात्र साधर्म्य और सारूप्य पर आधारित न होकर प्रभाव साम्य की कोटि तक पहुंचता है इसलिए प्रतीक, उपमा, रूपकातिशयोक्ति

उपमान आदि अलंकारों से उच्च कोटि का है ।

आचार्य शुक्ल के अनुसार-'प्रतीक का आधार सादृश्य या साधर्म्य नहीं बल्कि भावना जगाने की निहित शक्ति है, अलंकार में उपमान का आधार सादृश्य या साधर्म्य ही माना जाता है । अत: जब उपमान प्रतीक नहीं होते पर जो प्रतीक उपमान होते हैं वह काव्य की बड़ी अच्छी सिद्धि करते हैं ।'[९४] प्रतीक किसी अदृश्य या अप्रस्तुत के निमित्त प्रस्तुत किए गये प्रत्यक्ष या दृश्य का संकेत है । प्रतीक स्थूल विचारों को सूक्ष्मता प्रदान करता है जबकि बिम्ब या इमेज सूक्ष्म को स्थूल और मूर्तरूप देता है । वस्तुत: कविता की भाषा अभिधात्मकता से आलंकारिकता और आलंकारिकता से प्रतीकात्मकता का रूप धारण करती है, आधुनिक बिम्बवादी आलोचकों ने जिन एन्द्रिय बिम्बों और विचार प्रधान बिम्बों को महत्व दिया है उनका निर्माण क्रमश: आलंकारिक और प्रतीकात्मक भाषा द्वारा होता है ।

बिम्ब और प्रतीक अब अलंकार मात्र न रहकर स्वतन्त्र रूप में शिल्प के तत्व बन गये हैं । बुद्धि को जीवन के रहस्यमय तत्वों के प्रकाशन में असमर्थ पाकर बुद्धिवाद के विरोध में बिम्ब एवं प्रतीकवादियों ने इसे आन्दोलनात्मक रूप दे दिया । कवि को प्रतीक का आश्रय, सूक्ष्म अनुभूतियों, अथवा वर्णित सन्दर्भों के अंकन में सादृश्य विधान को असमर्थ पाकर लेना पड़ता है । बिम्ब एवं प्रतीक अलंकार की ही तरह काव्य के स्वतन्त्र उपादान बन चुके हैं । इन अलंकारों से मिलती-जुलती कथन की भंगिमाओं को अलंकारों में समाहित कर देना सर्वथा अनुचित होगा । यद्यपि ये कथन की भंगिमाएं पुरानी होकर- होते हुए भी नयी कही जायेंगी ।

भाषा का चित्रत्व विधान : बिम्ब, मिथ, मिथक पुराकथा इतिहास रूप आदि :

नयी कविता में बिम्ब को सर्वोपरि महत्व देने का श्रेय बिम्बवादी आन्दोलन को है। बिम्ब अंग्रेजी शब्द इमेज का पर्यायवाची है। हिन्दी साहित्य में इसका प्रचलन रूप विधान और चित्र विधान के रूप में रहा है। दर असल यह अलंकारों के ही गोत्र का है। नयी कविता में इसे सर्वथा स्वतंत्र सत्ता प्रदान की गयी है। बिम्ब के स्वरूप के विषय में 'स्टेफेन जे ब्राउन' का कथन है-'साहित्य में बिम्ब से तात्पर्य कलाकार की उस क्षमता से है जिसके सहारे वह बीती हुई घटनाओं और विषय-वस्तु का रंग, ध्वनि, गति, आकार, प्रकार सहित देशकाल परिस्थिति को ध्यान में रखकर शब्द चित्रों में वर्णित कर देता है और यह शब्द-चित्र ठीक उसी प्रकार का होता है जैसे ठीक कि उस घटना या वस्तु का स्वरूप था।[६५] भारतीय काव्य-शास्त्र में यह प्रणाली भाषा से सम्बन्धित समझी जाती है। काव्य में चित्रत्व भारतीय काव्य शास्त्रियों के अनुसार भाषा का ही एक गुण है। कार्य, दृश्य, स्थान, पात्र आदि जितने ही स्पष्ट होंगे, चित्र- विन्यास में जितना स्थूल गोचर विषय होगा, जितना ही परिचित विषय होगा, उतना ही भाव-संचार सहज होगा।[६६] 'बिम्ब विधान हिन्दी काव्य शास्त्र की परिभाषा में प्रस्तुत और अप्रस्तुत योजना का ही रूप था जिसे इलियट ने आब्जेक्टिव को रिलेटिव[६७] कहा है।'आदि काल से ही भाषा के दो प्रकार माने गये हैं, संकेतात्मक तथा बिम्ब विधायक आगे चलकर चित्र भाषा ने बिम्ब विधायक भाषा का स्थान ग्रहण कर लिया।[६८] वस्तुत: बिम्ब एक प्रकार का चित्र या हूबहू प्रतिबिम्ब पाठक या श्रोता के मस्तिष्क में खींचता है।

कमल को बिम्ब बनाने के पहले कवि एवं पाठक को कमल का पूरा ज्ञान होना आवश्यक है। जब तक कवि एवं पाठक कमल की विशेषता से पूर्णतया: परिचित नहीं हैं तब तक कवि की भाषा सम्प्रेषण में विफल रहेगी। कमल का उच्चारण करते हुए कवि उस फूल को मस्तिष्क में रखता है जो पानी में उत्पन्न होने वाले बड़े- बड़े गोल आकार के हरे- हरे पत्तों से जन्म लेनेवाला एक गोलाकार भीनी- भीनी सुगंध वाला सुडौल फूल है जिसकी पंखुड़ियां सामान्यत: लाल रंग की होती हैं। उच्चारण के समय यही लाल रंग वाले कमल विशेष का बिम्ब कवि के मस्तिष्क में मौजूद होता है। कविता पढ़ते अथवा सुनते समय पाठक एवं श्रोता के मस्तिष्क में वही बिम्ब उभरेगा जो कवि के मस्तिष्क में उभरा था। काव्य शास्त्र में जिसे मात्र-चित्र विधान और भाव पद्धति के रूप में ग्रहण किया गया मनोवैज्ञानिकों का प्रभाव ग्रहण कर लेने के बाद बिम्ब काव्य की आत्मा व काव्य का मूल तत्व भी कहा जाने लगा। भारतीय काव्यशास्त्रियों ने शब्द चित्र और अर्थ चित्र को अवर या अधम माना है।[६६] जबकि इसका काव्य में अप्रत्याशित महत्व है।

संस्कृत आचार्यों का रस, ध्वनि, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति की भूल-भुलैयों में पड़ जाने से इसे स्वतंत्र महत्व न दिया जा सका। अर्थ चित्र के प्रसंग में काव्य प्रकाश कार मम्मट ने मण्ठ कवि कृत `हयग्रीव वध` नाटक से जो उदाहरण दिया है उसमें एक सफल बिम्ब है - ` मित्रों को मान देने अथवा शत्रुओं के मान का दमन करने वाले जिस (हयग्रीव) के स्वेच्छापूर्वक अपने भवन से निकलने मात्र का समाचार पाकर इन्द्र ने घबराहट के कारण जिसकी अर्गला लगवा दी, वह (बंद द्वारवाली) अमरावती मानो ऐसी लग रही है,

जैसे भय के मारे आंख मूंद ली हों। [१००] कवि ने बन्द कपाटों वाली पुरी के कल्पित रूप -चित्र को व्यक्त करने के लिए आंखें मूदे हुए एक सादृश्य(उत्प्रेक्षा) के रूप में प्रस्तुत किया। [१०१]

शब्द चित्र के उदाहरण में गंगा के उछलते हुए जल का बिम्ब 'स्वच्छन्दोच्छल' [१०२] आदि पढ़ने से स्पष्ट रूप से फलकता है। संस्कृत के आचार्य काव्य की इस शक्ति से परिचित थे किन्तु इसे विशेष महत्व नहीं देते थे। सैद्धान्तिक रूप से काव्यात्मा विषयक अन्य तत्वों के साथ ही बिम्ब का विवेचन पाश्चात्य काव्यशास्त्र में मिलता है।

लीविस ने भी बिम्ब को शब्दचित्र कहा है [१०२] लीविस के अनुसार 'काव्य की आत्मा बिम्ब है और स्वयं कविता भी विभिन्न बिम्बों का समूह है। [१०३] इस प्रकार टी० ई० ह्यूम ने बिम्ब को कविता का अलंकरण कहकर ही संतोष नहीं किया अपितु उसे काव्य की प्राण शक्ति बताया है। [१०४] मिस स्पर्जियन ने बिम्ब की व्यापकता की ओर संकेत करते हुए काव्य के समस्त अलंकारों को बिम्ब के ही अन्दर समाहित करना चाहती हैं। उनके अनुसार 'काव्य में प्रयुक्त प्रत्येक उपमा, रूपक, कल्पना चित्र या काल्पनिक अनुभूति जिसे कवि अपने विचारों और भावों से संयुक्त कर प्रस्तुत करता है, बिम्ब की ही सीमा में आते हैं। [१०५] कालरिज भी बिम्ब को अलंकारों से सम्बन्धित मानते हैं। उनका कहना है कि-'बिम्ब संवेदना की अनुकृति, कोई भाव, कोई मानसिक घटना, कोई अलंकार, या वस्तुओं की तुलनात्मक इकाई तक हो सकता है।' [१०६]

नयी कविता में नये बिम्बों का प्रयोग :

नयी कविता के कवियों ने विज्ञान, प्रकृति, मनोविज्ञान, धर्म,

लोक साहित्य, इतिहास आदि क्षेत्रों से बिम्बों का चयन किया है । 'लोक-साहित्य, धर्म, पुराण और इतिहास के खण्डहरों में बहुत से अज्ञात प्रतीक और अदृश्य बिम्ब पड़े हुए हैं कि जिनकी खोज के द्वारा नयी कविता की संभावना का पथ और भी प्रशस्त किया जा सकता है । [१०७] बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया में भाव(इमोशन) आवेग(पैशन), अनुभूति(फीलिंग) और ऐन्द्रियता (सेन्सुअस नेस) के महत्व को सभी ने स्वीकार किया है । इन तत्वों की उपस्थिति ही बिम्बों को जीवन्त और प्राणवान बनाती है । 'बिम्ब केवल यथार्थ की प्रतिच्छवि विशेष नहीं होते अपितु वे दर्पण की भांति होते हैं जिसमें चेहरे की रूप-रेखाओं से परे किसी सम्बंधित सत्य का उद्घाटन होता है । [१०८] लीविस ने बिम्ब की ऐन्द्रियता पर बल दिया है, प्रत्येक बिम्ब में भावात्मक या बौद्धिक-ऐन्द्रियता होती है । [१०९] लीविस के मत में किसी कवि की आधुनिकता के पहचान के तीन साधन हैं- शैली, बिम्ब और विषय वस्तु । [११०] नवीन आचरण प्रणाली नये विषय और नये विचार नये बिम्बों को जन्म देते हैं । परिणामत: भाषा में भी नवीनता आती है । [१११]

डा० शंभूनाथ चतुर्वेदी ने बिम्ब को केवल दो भागों में बांटा है- ऐन्द्रिय बिम्ब और मानस बिम्ब । [११२] डा० कैलाश वाजपेयी ने बिम्बों को ६ भागों में बांटा है- (१) दृश्य बिम्ब(२) वस्तु-बिम्ब(३) भाव बिम्ब (४) अलंकृत बिम्ब(५) सान्द्र बिम्ब(६) विकृत बिम्ब [११३] ।

वस्तुत: बिम्बों के विवेचन और वर्गीकरण में उनकी विशेषता, कार्यक्षमता और मनोवैज्ञानिक दृष्टि का आधार बनाकर कई वर्ग बनाया जा सकता है । 'बिम्बों का वैज्ञानिक वर्गीकरण करना तो बड़ा जटिल कार्य है,

कारण यह है कि काव्यात्मक बिम्बों की संख्या अपरिमित है और ऐसे अनेक काव्यात्मक बिम्ब हैं जिनके स्वरूप और अर्थ संकेत का परिधि विस्तार इतना जटिल होता है कि उन्हें किसी एक ही प्रकार का बिम्ब घोषित करना उचित नहीं है।'[११४] वैसे बिम्ब के तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं -(१)दृश्य बिम्ब या वस्तु बिम्ब (२) मानस बिम्ब(३) संवेद्य बिम्ब। नयी कविता में बिम्बगत नवीनता एक तो जीवन की अपूर्णता और विविधता में ग्रहण करने के कारण है बदलती हुई काव्य संवेदना के साथ नये- नये क्षेत्रों से बिम्बों का चयन हुआ है।

नयी कविता में जो बिम्ब प्राप्त होते हैं वे अपने पूर्ववर्ती काव्य-बिम्बों की अपेक्षा भिन्न-किस्म के हैं। एक ओर तो वस्तुवर्गीय और मानसवर्गीय बिम्बों का प्रयोग हुआ है तो दूसरी ओर संवेद्य,संश्लिष्ट और यौन बिम्बों का प्रयोग हुआ है। अनेक प्रकार के बिम्ब जीवन के विविध पक्षों से चुन-चुनकर लिए गये हैं, मुक्ति बोध और अज्ञेय की अधिकांश कविताओं में विराट बिम्ब और स्मृति बिम्बों की योजना हुई है। नयी कविता में प्रयुक्त इन नूतन बिम्बों पर अंग्रेजी के बिम्बवादी कवियों जैसे इलियट एजरा पाउण्ड, लारेंस, डायलन टामस तथा ह्यूम आदि कवियों का प्रभाव है। यह जोर देकर नहीं कहा जा सकता कि पश्चिमी काव्य साहित्य का ही प्रभाव है और उनके द्वारा प्रयुक्त बिम्बों का ही अनुकरण हुआ है। बदलते हुए युग, बदलती हुई काव्य संवेदना और मापदण्ड के साथ बिम्बों के भी नये- नये आयाम विकसित हुए हैं। नये कवियों के अधिकांश बिम्ब, अपने गांव-गंवई के अकृत्रिम जीवन प्रणाली के अनेक सन्दर्भों से जुटाए गये हैं। एजरा पाउण्ड ने जिस सघन बिम्ब प्रधान, चित्रमय और ठोस कविता

का आदर्श निरूपित किया था उसका गहरा प्रभाव शमशेर पर देखा जा सकता है। 'एक चीज जो आधुनिक कला, और कविता का भी, अक्सर खास अंग बन जाती है, वह है प्रेरणा के चित्र की जमीन में पैदा होना उभरना-लगभग चित्र की ही जमीन पर रहना। कभी- कभी मूर्ति की जमीन से उभरना, और मूर्ति की रहना। कभी- कभी संगीत का पक्ष कविता मात्र का स्थान इस तरह ले लेता है कि कविता को संगीत की जमीन से परखने पर ही अर्थ खुल सकेंगे।[११५] अतः यह सिद्ध किया जा सकता है कि ये कवि-चित्रकार-चित्रकार कवि हैं।[११६] सघन, ठोस और अपारदर्शी[११७] बिम्बों की दृष्टि से 'कुछ और कविताएं' संग्रह की 'टूटी हुई बिखरी हुई', 'ये लहरें घेर लेती हैं', 'सींग और नाखून', 'शिला का खून पीती थी' आदि कविताएं उल्लेखनीय हैं। नयी कविता के कवियों ने गलियों, तिकोनों, चौराहों, सड़कों, मकानों, सीढ़ियों के बिम्ब खींचे हैं तो कहीं युगीन औद्योगिक सभ्यता के विभिन्न पक्षों एवं सन्दर्भों को रूपायित करने के लिए दैनन्दिन जीवन के चिर- परिचित उपकरणों की सहायता तथा विभिन्न क्षेत्रों से बिम्बों का चयन किया गया है। आधुनिक नगर सभ्यता की निस्सारता और यान्त्रिकता में घुट रहे मनुष्य की उद्देश्य-हीनता रूपायित करने के लिए, इन कवियों ने सड़कों के बिम्ब निर्मित किए हैं। कहीं- कहीं पगडण्डियों के बिम्ब बड़े ही सजीव, सुन्दर और आकर्षक लगते हैं।[११८] राजपथ। बेहोस रेंडी देह से नंगे पड़े हैं।[११९] रात्रि की काली स्याह। कड़ाही से अकस्मात। सड़कों पर फैल गयी। सत्यों की मिठाई की चाशनी।[१२०] रास्ते पर चलता हूं कि पैरों के नीचे से। खिसकता है रास्ता-यह कौन कह सकता है। - - चलता हूं देखता हूं नगर का मुस्कराता व्यक्तित्व महाकार। दमकती रौनक का उल्लास। चह-चहाती सड़कों की साड़ियां।[१२३] सड़कें विधवा-सी नजर आयीं।[१२४] मानव-

शरीर के विभिन्न अंगों के बिम्ब धर्मवीर भारती[१२५], कुंवर नारायण[१२६] और मुक्ति बोध[१२७] की कविताओं में स्पष्ट रूप दृष्टिगोचर होते हैं। नयी कविता में सीढ़ियों के बिम्ब यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं - जड़वत् पत्थर-सी वे बैठी हैं। सीढ़ी पर[१२८], किसी वीरान टावर की। अंधेरी भीतरी गोलाइयों के बीच। चक्करदार जीना एक चढ़ता हूं, उतरता हूं।[१२९]

> 'सीढ़ियां थीं बादलों की झूलती
> टहनियां सी।'[१३०]
> 'शिला का खून पीती थी'

कविता में संगीत और संगीत में काव्य का साधर्म्य प्राय: स्वीकृत है। इलियट ने इसे लिए 'द म्युजिक आफ पोयट्री' पर महत्त्व दिया था। नयी कविता में संगीत के बिम्ब ढालने में शमशेर का महत्वपूर्ण स्थान है।[१३१]

> मेरी बांसुरी है एक नाव की पतवार-
> जिसके स्वर गीले हो गये हैं।
> छप्-छप्-छप मेरा हृदय कर रहा है - - -
> छप् छप् छप[१३२]

गंध के बिम्ब अज्ञेय, मुक्ति बोध, शमशेर, कुंवरनारायण नरेश की कविताओं में खुशबू बिखेरते पाये जाते हैं।

तुम्हारी देह। मुझको कनक-चम्पे की कली है। दूर ही से। स्मरण में भी गंध देती है।[१३३] इतिहास का -सा बोल मन का अन्तरंग।

महकता था। और थी प्रेमी भुजाओं से छूटी षोडश उमंगों की महक। थी महक शराब की।[१३४] फसलों के महकते सुनहले फैलाव।

मैं हो चला जाता हूं। व आंखों में चमकती चांद की लपटें। हृदय में से। निकलती आम्र-तरु-मधु-मंजरी की गन्ध।[१३५]

ये रजकण अब भी मरे नहीं,
इनमें जो उठने की मनो क्षमता गहरी :
इस मिट्टी में। अब भी जीवन की गंध भरी।[१३६]

नरेश की कविता में नायिका खस की तरह खुशबू फैलाना गंध बिम्ब को और भी रंगी बना देता है।[१३७] इसके अतिरिक्त रघुवीर सहाय और अजितकुमार की कविताओं में सुन्दर गंध बिम्बों का चयन हुआ है - 'भीड़ में मैलखोरी गन्ध मिली। भीड़ में आदिम मूर्खता की गंध मिली। भीड़ में मुझे नहीं मिली मेरी गंध। अब मैंने सांस भर उसे सूंघा।[१३८] नयी कविता में आस्वाद बिम्ब भी यत्र-तत्र मिल जाते हैं। जगदीश गुप्त और विजयदेव नारायण साही ने इन बिम्बों के प्रयोग किए हैं।

कच्चे आमों की फांकी सी
आंखें तुम्हारी
ओठों को अजब खट्टा मीठा स्वाद दे गयीं
यह धूप ह बहकी- बहकी
कि शराब आसमानी[१४०]

स्पर्श बिम्बों के प्रयोग में गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, पद्मधर त्रिपाठी कायल हैं ।

खुली ओस में बिछी दुधिया सेज सी। पानी सी ठंढी है ऋतु मनभावनी।[१४१] उफ मेरी बाहों में शव जैसा ठण्डा। कौन गिरा।[१४२] शिखरों पर बिछली।सुबह की। कुहरिल धूप। कुने-कुने स्पर्श का। यह अगम विस्तार।[१४३] श्रवण बिम्बों का प्रयोग अज्ञेय, नरेश मेहता और मुक्ति बोध की कविताओं में मिलता है :-

मेरे घोड़े की टाप। चौखटा चढ़ती जाती है।[१४४] ये सातों पोशाक पहनकर? --------फुलझड़ी।बिजली बूंदनियों की तड़-तड़-तड़-तड़।तक तड़ाक की आतिश बाजी।[१४५] भागता मैं दमछोड़। घूम गया कई मोड़। भागती है चप्पल, चट-पट आवाज। चाँटों सी पड़ती।[१४६] नयी कविता में भावों एवं विचारों के बिम्ब भारती, अज्ञेय एवं सर्वेश्वर की कविताओं में भरे पड़े हैं । स्मृति के कब्जे पर कसे मन की विविध स्थितियों और दशाओं का भान कराता हुआ यह बिम्ब इसी श्रेणी में आता है -

'रात भर। हवा चलती रही। मन मेरा - - -। स्मृति के कब्जे पर कसे हुए खिड़की के पल्ले:सा।खुलता, बन्द होता रहा - - - कुछ और दीवार के बीच सर पटकता रोता रहा ।[१४७]

नयी कविता पर वैज्ञानिक और यान्त्रिक युग का पूर्ण प्रभाव पड़ा है ।[१४८] यान्त्रिक और वैज्ञानिक बिम्बों का प्रयोग अज्ञेय, भारती, मदन वात्स्यायन, सर्वेश्वर, लक्ष्मीकांत वर्मा, नलिन विलोचन, दुष्यंत कुमार, भारत भूषण व प्रयागनारायण त्रिपाठी ने मोटर, रेलगाड़ी, टेलीविजन, एटम और रेफ्रिजरेटर आदि को कविता में लाकर बिम्ब निर्माण किया गया है --

'पहाड़ियों से घिरी हुई छोटी-सी घाटी में
ये मुंह फांसी चिमनियां बराबर। धुआं उगलती जाती हैं। [१४९] थर्मामिटर के पारे सी। चुपचाप भावनाएं चढ़ती उतरती हैं। [१५०] मैं स्याह चन्द्र का फ्यूज बल्ब। [१५१] इंजन के हैड लाइट सा शोर-गुल के बीच। सूरज निकल गया। गार्ड की रोशनी-सा पीछे-पीछे गुमसुम अब- शुक्रतारा जा रहा है। [१५२] उम्र की कितनी ही खन्दकों को लांघती। अंधियारी चट्टानी टनलों में। जिन्दगी की रेलगाड़ी। प्यास की सीटियां मारती, अनचाहे मनमारे गुजरती ही चली गई। [१५३]

नयी कविता में जहां पर वैज्ञानिक उपकरणों के बिम्ब मिलते हैं वहीं पर ज्यामिति, तर्कशास्त्र, और गणित विषयक बिम्ब भी मिलते हैं जिनकी सृष्टि तर्कशास्त्र, रेखागणित, और गणित के आदि के सहारे की गई है। नरेश ने प्रेमी और प्रेमिका के प्रणय को ज्यामितिय बिम्ब द्वारा स्पष्ट किया है। [१५४] प्रयाग नारायण त्रिपाठी ने 'समानान्तर लकीरें' शीर्षक कविता में प्रेमी और प्रेमिका की स्थिति को यों रखा है -

' तो सदा चलती रहो तुम
तो सदा चलता रहे ये स्वप्न
तो सदा चलता रहूं मैं
ये समानांतर लकीरें तीन। [१५५]

नयी कविता में इन बिम्बों के अतिरिक्त नवीनता के आग्रह और प्रयोगों की अतिशयता के कारण नये कवियों का बिम्ब विधान एक सीमा तक विरूप एवं उप-हासास्पद भी बन गया है। डा० शिवकुमार मिश्र के

अनुसार- 'नयी कविता में बिम्बवाद, फ्रायड की मनोविश्लेषण सम्बन्धी उपपत्तियां, यौन बिम्ब, क्लासिकल स्पर्श प्राप्त बिम्ब जिनमें अतीत का गाढ़ा रंग विद्यमान है तथा मात्र दृश्य ही नहीं इन्द्रिय संवेदना को छूने वाले सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तरों को छूने वाले स्पर्श ध्वनि, तथा गंध चित्रों की स्थिति विशेषण, विशेष्य तथा वातावरण को सजीव करने वाले, तथा व्यथित मानव की छटपटाहट को सजीव ढंग से व्यक्त करने वाले बिम्ब प्राप्त होते हैं।' [१५६]

नयी कविता में अज्ञेय, भारती, गिरिजाकुमार माथुर, शमशेर, कुंवरनारायण और इन्दु जैन, की कविताओं में खुलेआम यौन बिम्बों के प्रयोग हुए हैं -

'और वह दृढ़ पैर मेरा है। गुरु स्थिर स्थाणु सा जड़ा हुआ। तेरी प्राण पीठिका पर। लिंग सा खड़ा हुआ।[१५७] थक जायें तेरे कुच। मेरे सीने पर धक्-धक् करके। फड़कें। फिर रहजायें गुम्फित जंघाएं।[१५८]
सो रहा है झांप अंधियाला। नदी की जांघ पर। डाह से सिहरी हुई यह चांदनी। चोर पैरों से उचक कर। झांक जाती है।[१५९] घिर गया नभ। उमड़ आये मेघ काले। भूमि के कम्पित उरोजों पर झुका -सा विशद श्वासाहत, चिरातुर। छा गया इन्द्र का नील वक्ष। वज्र-सा यदि तड़ित-सा झुलसा हुआ -सा [१६०]

नयी कविता में सन् साठ के बाद उभरे हुए बिम्ब असम्बद्ध एवं खण्डित तिरते हुए नजर आये। लक्ष्मीकान्त वर्मा ने इस मोह की ओर संकेत करते हुए लिखा है- "भाषा और बिम्बों की यह निरर्थकता ही हमें अब 'नंगे

शब्दों की ओर ले जा रही है । ताजी कविता जिस भाषा की खोज में है वह 'नंगी भाषा' है- आवरणहीन, सज्जाहीन, संस्कार हीन और इन सबसे अधिक ऐसा नंगापन जिसमें अभिजात्य जंगलीपन के ऊपर एक समय बोध की छाप लगा सके ।[१६१] नयी कविता के बिम्ब विधान की नयी दिशाओं में पारदर्शी बिम्ब, प्रतीकात्मक बिम्ब, बिम्बात्मक अमूर्तन आदि का उल्लेख किया जा सकता है ।[१६२] खण्डित बिम्बों का प्रेरणा-स्रोत फ्रायड का उपचेतन मन का सिद्धान्त है । इस पद्धति में कवि एक ही कविता में ऊपरी तौर पर परस्पर असम्बद्ध दीखने वाले बिम्ब प्रस्तुत करता है । खण्डित बिम्बों के पक्ष में मुख्य तर्क यह है कि आज के कवि की खण्डित और जटिल अनुभूति को खण्डित बिम्ब ही ठीक-ठीक अभिव्यक्त कर सकते हैं । जहां अनुभूति खण्डित और जटिल है, वहां इन बिम्बों का प्रयोग उचित है। किन्तु जहां ऐसा नहीं है वहां खण्डित बिम्ब निरर्थक ही सिद्ध होंगे ।

खण्डित बिम्बों की योजना का उदाहरण- 'अज्ञेय की इतिहास की हवा'[१६३] तथा मुक्ति बोध की लम्बी कविताओं में मिलता है ।[१६४] मुक्ति बोध की कविताएं लम्बी होने के कारण विभिन्न असम्बद्ध लगनेवाले बिम्बों, दृश्यों, भाव चित्रों और सन्दर्भों को कलात्मक संयोजन प्रदान करने में, वे बेजोड़ ठहरते हैं - 'डूबता चांद कब डूबेगा' शेष पुरुष, ठूठों पर बैठे घुग्घू दल, मुतही छायाएं, राक्षस बालक, गांधी जी की टूटी चप्पल, हुंआं-हुआं की आवाज, कारावासी वासुदेव, महाकंस, युगवीर शिवाजी, पीड़ा की रामायण लिखने वाले तुलसीदास' आदि खण्डित बिम्ब असम्बद्ध होते हुए भी, आन्तरिक रूप से कविता की मुख्य भावधारा से जुड़े हुए हैं । ये खण्डित बिम्ब आज के लघु मानव के खण्डित व्यक्तित्व

को प्रतिच्छादित करते हैं । मुक्ति बोध स्वयं कहते हैं —

> प्रत्येक अर्थ की छाया में अन्य अर्थ
> झलकता साफ-साफ ।[२६५]

इसके अतिरिक्त केदारनाथ सिंह, लक्ष्मीकांत वर्मा, रघुवीर सहाय, श्रीकान्त वर्मा की कविताओं में खण्डित बिम्बों के जीते जागते चित्र प्रतिबिम्बित हुए हैं ।

सन् साठ के बाद नयी कविता में बिम्बों का महत्व रहा परन्तु उतना नहीं । 'नयी कविता बिम्ब केन्द्रित रही है और अक्सर कवियों के बिम्ब का ऐसा घटा-टोप तैयार हुआ सातवें दशक तक आते-आते कवियों को यह महसूस हुआ कि कविता को बिम्ब से मुक्त कराके ही उसे जीवन्त और प्रासंगिक रखा जा सकता है ।[२६६] सन् साठ के बाद की कविता के अधिकांश बिम्ब भाव बिम्ब हैं जो युवा पीढ़ी के मोह भंग के बाद के आक्रोश, घृणा, भय, विवशता, असुरक्षा, ऊब आदि के मनोभावों को मूर्त करते हैं । ये भाव बिम्ब अधिकांशत: खण्डित बिम्ब हैं —

> ऊर्ध्व संगमरमर पर लगे हुए कुत्ते-सी
> यह सारी दुनिया :
> जिसे हम न पा सके
> हमारी छेक-छिदी देह को नहीं पता
> वहां कहीं शहर भी होता है
> कटे हुए पैरों में। अपनी यात्रा लपेट कर
> हम रेगिस्तानों में फैले पड़े हैं[२६७]

विशेष रूप से इन कविताओं में राजनीति, शासन और सेक्स सम्बन्धी अधिक उभरे हैं। सेक्स सम्बन्धी कविताएं राजनीति की तुलना में अधिक बिम्बात्मक हैं।[१६८]

नयी कविता में मूल्यवान अभिव्यक्ति की अनुरूपता में नये शब्द प्रयोगों और आधुनिक सन्दर्भों से सम्बन्धित बिम्बांकन भी हुआ है। इस प्रकार की बिम्ब योजना में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, विशेषण-विपर्यय द्वारा छोटे-छोटे तराशे हुए बिम्ब भी मिलते हैं और संश्लिष्ट तथा कल्पना प्रसूत सन्दर्भ गत उच्च कोटि के भी बिम्ब मिलते हैं। थिगलियां, सुलगती मीड़, समुदाय फांस, पान्थ, त्रिशूल, आलोक, स्रोतस्विनी, द्वीप, चांद, नम, स्थाणु आदि कितने विशिष्ट संज्ञा शब्दों का प्रयोग अज्ञेय ने किया है। अज्ञेय ने विशिष्ट बिम्बों को एक खास तीखापन देने के लिए चुने हुए विशेषणों के प्रयोग द्वारा बिम्बों को एक नया तारता दिया है। जैसे थिर-पत्ती, नमचीड़, रेतीले कगार, गिरती चट्टानें, झोंप अंधियाला, मौन नीड़ इत्यादि। विशेषण-विपर्यय द्वारा अज्ञेय ने बिम्बों को एक नयी भास्वरता दी है, जैसे धूप-कनक गुच्छलाल। यहां फूलों के गुच्छे को महत्व दिया गया है और विशेषण को बाद में रखा गया है। इस प्रकार के बिम्बों की एक अपनी विशेषता और है कि इनमें विशेष शब्द का प्रयोग ही नहीं किया गया। जैसे- लदे-छदे, जल-बुझी, बची-खुची, झरी-पड़ी, इत्यादि। लदे-छदे से खूब अच्छी तरह फली-फूली डालियों का बिम्ब उभरता है और जली-बुझी से बहुत है। धर्मवीर भारती का बिम्ब विधान पौराणिक अधिक है। संज्ञा शब्दों से निर्मित बिम्बों में कवि ने कनपटियां, झाड़ी, फोड़े, ज्योतिर्वाणि, अन्धड़, पगध्वनि इत्यादि संज्ञाओं को ग्रहण किया है। विशेष प्रधान बिम्बों में सूना गलियारा,

दहाड़ता हुआ समुद्र, पिघली आग, सैकड़ों केंचुल चढ़े अंधे सांप, अन्धा समुद्र इत्यादि को देखा जाता है। अन्धी संस्कृति में अन्धी विशेषण से अज्ञेय संस्कृत अमूर्त शब्द, मूर्त हो गया है। क्रियाओं द्वारा भी भारती ने बिम्ब योजना की है जैसे फुफकारेंगे, फाड़ खाएगा, कुतर रहा, फुलस गये, मरोड़ दिया, दबोचेंगे इत्यादि कहीं-कहीं सर्वनामों द्वारा कहीं संज्ञाओं के प्रयोग द्वारा जीवन्त बनाया है। भारती ने अंधायुग में कल्पना से सहारा लेकर सुन्दर बिम्बों का चयन किया है —

बिजली सा झपट खींचकर शय्या के नीचे
घुटनों से दाब लिया उसको
पंजों से गला दबोच लिया
आंखों के कोटर के दोनों साबित गोले
कच्चे आमों की गुठली जैसे उछल पड़े
खाली गड्ढों में काला लोहू भर गया। [१६६]

कच्चे आमों की गुठली सर्वथा नया प्रयोग है। और उसके उछलने में एक विशेष प्रकार का ही बिम्ब उभरता है। मुक्ति बोध फैंटेसी के कवि है उनकी फैंटेसी बिम्बों से परिपूर्ण है। मुक्ति बोध ने मूर्त और अमूर्त दोनों प्रकार की स्थितियों, भावों और विचारों को विशिष्ट विशेषणों द्वारा बिम्बित करने का प्रयास किया है। इस-लहरीला, असंयम, खुरदुरा, अजगरी तना, अंधेरों के कन्धे, गुप्तचरी ताक, दूधिया कुरता, गोल-गोल मटकों के चेहरे, धराशायी चांदनी, डार्कमासेज, पुच्छलतारा, जिह्वाकार मीनार, लम्बमुख दानव आदि भयानक बिम्बों के पुल बांधने का प्रयास कवि ने किया है।

असंयम अमूर्त भाव है लेकिन लहरीला विशेषण द्वारा वह मूर्त हो उठा है। चांदनी के साथ धराशायी और ताक के साथ गुप्तचरी विशेषणों ने बिम्बों को एक नई दृष्टि दी है। गिरिजाकुमार माथुर ने बिम्ब योजना का एक नया सफल प्रयोग किया है -
रेशमी राहें, सूनी सन्ध्या, लज्जित तस्वीरें, झाड़ी-झुरमुट, पानी भरे, निर्जन राहें, थकी राहें, भीगा दिन, बादल ढकी, फूल भरी, सुमन सेज, बूढ़ी रूढ़ियां। कवि ने एक ही बिम्ब को एकाधिक उपमाओं अथवा विशेषण और उपमा द्वारा व्यक्त किया है —

उठ रहा है वह नया दूज का चांद,
दूधिया चांद श्वेत हंसली सा
लालिमा सांझ की सिमट सारी
जा रही संवले मैदानों में।[१७०]

प्रस्तुत कविता में दूधिया विशेषण और श्वेत हंसली की उपमा द्वारा दूज के चांद को बिम्बित किया गया है। 'बावड़ी की उनघनी गहराइयों में शून्य। ब्रह्म राक्षस एक बैठा है।[१७१] में मुक्ति बोध ने एक साथ बाह्य और अन्तर दोनों प्रकार की स्थितियों को स्पष्ट करने के लिए प्रतीक को माध्यम बनाकर बिम्बांकन किया है।

मिथ, मिथक, पुराकथा इतिहास इत्यादि के प्रयोग :-

भाषा को चित्रमय एवं सजीव बनाने में बिम्बों के अतिरिक्त मिथकों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। मिथकों के निर्माण में इतिहास, पुराण

की घटनाओं, पात्रों एवं लोक-कथाओं का पूरा हाथ है।

मिथक के विषय में अश्विनी पाराशर का कहना है कि-'वास्तव में यह रचनाकार की कल्पना का वह मूर्त रूप है जो उसके व्यापक क्षेत्र को व्यक्त करने के लिए अतीत के उपकरण के रूप में प्रयुक्त हुआ हो, जिसके लिए किसी पुराकथा, घटना, चरित्र या विचार का आधार लिया गया हो। यह कोई ऐसी कथा या आख्यान नहीं जो एक दिन में बन जाता हो बल्कि यह तो मानव की आस्थाओं, भावनाओं, विश्वासों का ऐसा संयोजन है जो इतिहास या काल के प्रवाह में शनैः शनैः रूप ग्रहण करता हुआ समस्त मानव-समाज की चेतना को प्रभावित करता है।'[१७२] अज्ञेय के अनुसार 'मिथक की उपयोगिता केवल इस बात में मानना कि वह पुरातन और अधुनातन में एक सतत् समान्तरता दिखाते चलने का साधन है, या कि समकालीन इतिहास की अराजकता- व्यर्थता को नियंत्रित, अनुशासित रूप में प्रस्तुत करने में सहायक होता है, मिथक को गलत समझना हो न हो अधुनातन इतिहास के साथ गलत नाता जोड़ना है।'[१७३]

समय के प्रवाह में जब मूर्त घटना अमूर्त प्रतीक बन जाती है तब उसे मिथ या मिथक कहा जाता है। मिथ ऐतिहासिक, पौराणिक एवं धार्मिक होते हैं। वेबस्टर कोश में मिथ की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है, ऐतिहासिक, पौराणिक गाथा जो मानव प्रकृति, प्राकृतिक-निष्कर्षों, मानव के उदय, व्यवहार, परम्परा आदि को व्यक्त करती है मिथ हैं।[१७४] धार्मिक एवं पौराणिक कथा के आधार पर जिनसन्दर्भों एवं पात्रों की काव्य में अभिव्यक्ति दी जाती है वह सामान्य साहित्यिक अभिव्यक्ति की अपेक्षा सौन्दर्योद्घाटन में अधिक प्रभावी और सक्षम होता है। मिथक बिम्ब एवं

प्रतीक में मूलत: निहित होता है अज्ञेय के शब्दों में प्रतीक के मूल में मिथक है । पर प्रतीक में जान डालने के लिए नया मिथक हम गढ़ नहीं सकते । इसलिए प्रतीक को मरना, होगा अगर हम उसे फिर एक विचार में नहीं ढाल लेते- ऐसे विचार में जो आज के लिए यथेष्ट जान पड़ता है । उस विचार में से हम भले ही फिर एक नया प्रतीक पा लें ।[१७५] आज का कवि मानव मूल्यों और जीवन के सत्यों को पौराणिक मिथ द्वारा नवीन आयाम देता है उसे नये सन्दर्भों में उद्घाटित करता है । `कारावासी वसुदेव` आज का पराश्रित, असहाय, जीवन की मजबूरियों और विवशताओं की कारा में जकड़ा हुआ इंसान अपनी आत्मज सत्यता रूपी शिशु को स्वयं ही अपने हाथों से दूर नन्दग्रामे लाकर छोड़ देता है । इस मिथक के माध्यम से कृष्णयुगीन परिस्थितियों का नवीन अर्थान्वेषण परिलक्षित होता है । इस मिथक के द्वारा कवि ने तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक विसंगतियों को उजागर करने का प्रयास किया है । `सूर्य का स्वागत` कविता में दुष्यन्त कुमार ने क्वांरी, गर्भवती का असामाजिक गर्भ जो कि बाहर आने की तड़पन में है और जो स्थिति क्वांरि कुन्ता की गर्भवती स्थिति में थी वही अभिव्यक्ति कुंठा की भी है —

मेरी कुंठा
रेशम के कीड़े से ताने बाने बुनती
स्वर में, शब्दों से, भावों से
और वाणी से कहती सुनती
तड़प-तड़प कर बाहर आने को
सिर धुनती, गर्भवती है
मेरी कुंठा क्वांरी कुन्ती[१७६]

संसार में जब फुलवारियाँ चाहिए, आनन्द चाहिए उस समय विश्व युद्धरत है, इस प्रकार गिरिजा कुमार माथुर ने 'सीता' शब्द के प्रयोग से वही बिम्ब उपस्थित किया है जो पौराणिक आख्यान में सीता के उदाहरण, पीड़ा, आदि में व्यंजित है।[१७७] इसी प्रकार अज्ञेय ने भी नारियों की असहाय, पीड़ित और निर्बल रूप में द्रौपदी को मिथक का सहारा लेकर चित्रित किया है —

द्रौपदी सी चीखती हैं
नारियाँ निर्वस्त्र
जिनके चीर दु:शासन कहीं पर
फेंक आया खींचकर।[१७८]

धर्मवीर भारती के मिथकों के मूल में बिम्ब समाहित है। पवित्र उपमानों, बिम्बों का झिलमिलाता रूप इनकी कविता का सुहाग है[१७९]—

इसी प्रकार गिरिजा कुमार माथुर ने ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत किए हैं —

एशिया के कमल पर तुम भारती सी।
पूर्व के जन-जागरण की आरती सी।[१८०]

'आदम का पुत्र बहुत भटका अँधेरों में। चंगेजी न्यायों के खून भरे घेरों में',[१८१] कवि ने मिथक के माध्यम से अन्याय और बर्बरता को स्पष्ट किया है। 'दियाधरी' कविता में माथुर ने मालविका, वासवदत्ता, उदयन, आदि ऐतिहासिक पात्रों को चित्रित किया है। सूर्यदीप के बुझ जाने पर कमलों का सरोवर, माधवी और मालती के कुंजों की सृष्टि हो जाती है। दीप

की बुझती लौ हंसों में बैठी दमयन्ती सी लगती है । जो नल की पाती बांचती है ।[१८२] नरेश मेहता ने ऐसे ही ऐतिहासिक चित्र का सहारा लिया है ---

अमराई में दमयन्ती सी। पीली पूनम कांप रही है ।[१८३] यहां वर्षा काल में उदास और अनमनी पूनम की चांदनी का दृश्य है । नल द्वारा परित्यक्त अमराई में उदासमना और म्लान मुख लेटी दमयन्ती का सुन्दर ऐतिहासिक चित्र प्रस्तुत किया गया है । नरेश मेहता की कविता में -- हम सब इतिहास के गलियारे में । विजयी सिकन्दर से टहल रहे[१८४] में भी सुन्दर ऐतिहासिक चित्र है । `महाभारत कालीन पाण्डवों के मिथ द्वारा आज की परिस्थितियों से घिरे व्यक्ति के टूटने के भाव एवं जीवन की वास्तविकताओं के निषेध को व्यंजित किया गया है । सपनों का लाक्षागृह, मोम की दीवारें, जगत के यथार्थ से जल जायेंगी । अत: बाह्य जगत की कटुताओं से कवि बचना चाहता है ।[१८५]

मिथक के माध्यम से नरेश मेहता ने रामकथा के एक अंश द्वारा आधुनिक बोध को निरूपित किया है आज का व्यक्ति द्विविधा और संशय से ग्रस्त है --- एक

एक
अनुत्तरित संशय का सर्पवृक्ष
हरा हरा सा मुझमें
पीपल सा अहोरात्र[१८६]

इसी प्रकार `एक कंठ विषपायी` में मिथक का प्रयोग जर्जर एवं त्रस्त रूढ़ियों और परम्परा के शव से चिपटे हुए लोगों के सन्दर्भ में कवि ने एक नये तथ्य

की ओर संकेत किया है।[१८७] 'आत्मजयी' में मिथकों का उपयोग आधुनिक सन्दर्भों, समस्याओं का विवेचन-निरूपण करने के लिए किया गया है। कवि ने घोर-भौतिकवाद से सम्बद्ध उच्चतर मूल्यों का ह्रास, आत्मिक स्तर पर विघटन, नयी और पुरानी पीढ़ी के संघर्ष को मिथकों के माध्यम से एक नया रूप दिया है। 'कठोपनिषद' से लिए गये नचिकेता के कथानक को आधुनिकता के स्तर पर परखा गया है न कि उसे पौराणिक दिव्य कथा के रूप में।[१८८] नचिकेता की मन:स्थिति आज के व्यक्ति की मन:स्थिति है।[१८९] नचिकेता के अनुभव आज के व्यक्ति के अनुभव हैं, 'नचिकेता और वाजश्रवा असहमति, वाजश्रवा का नचिकेता को शाप देना' नयी और पुरानी पीढ़ी का संघर्ष उभर कर सामने आया है —

'तुम्हारी दृष्टि में मैं विद्रोही हूं
क्योंकि मेरे सवाल तुम्हारी मान्यताओं का उल्लंघन
करते हैं। नया जीवन बोध सन्तुष्ट नहीं होता
ऐसे जवाबों से जिनका सम्बन्ध
आज से नहीं अतीत से है
तर्क से नहीं रीति से है।[१९०]

इस प्रकार मिथकों के माध्यम से जटिल मन:स्थिति, क्षण विशेष की गहन अनुभूति, युगीन सन्दर्भों की अभिव्यक्ति, यथार्थ तथा उसमें निहित व्यंग्य-विडम्बना आदि के उद्घाटन के लिए हुआ है —

कौन कब तक बन सकेगा कवच मेरा ?
युद्ध मेरा, मुझे लड़ना
इस महाजीवन समर में अन्त तक कटिबद्ध,
मेरे ही लिए यह व्यूह घेरा,
मुझे हर आघात सहना,
गर्भ -निश्चित मैं नया अभिमन्यु, पैतृक युद्ध ।[१६१]

मुक्ति-बोध ने यथार्थ और उसमें निहित वेदना की अभिव्यक्ति का बहुत ही सुन्दर चित्र खींचा है ।[१६२]

नयी कविता में मिथकों के माध्यम से मूल्यहीनता, खण्डित -आस्था, संकीर्ण बोध तथा दैनन्दिन यथार्थ को उभारा गया है - तुम यशोधरा से भी बड़ी हो । और मेरा महाभिनिष्क्रमण। जो मिल की सायरेन के साथ मुंह अंधेरे ही हो जाता है। और तथागत-सा। जो मैं ओवर-टाइम करके आधी रात वापस आता हूं ठण्डे चूल्हे और साफ चौके को देख। तुम्हारी वीतराग स्थिति पर मन ही मन। उपदेश क देता हूं--। ---------।[१६३] लक्ष्मीकांत वर्मा की 'ठण्डा स्टोव, चाय का टिन और खाली बोतल[१६४] क्युरिमार्ट में अर्जुन को तलाश करते हुए श्रीकृष्ण, 'यह राख का स्तूप'[१६५] कविताओं में मिथकों का सशक्त प्रयोग हुआ है । 'अंधा युग' में महाभारत की घटनाओं आधुनिक सन्दर्भों में निरूपित किया गया है । युद्ध सभ्यता के भयावह चित्र मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किये गये हैं।[१६६] कनुप्रिया में मिथकों का प्रयोग एक भिन्न स्तर पर किया गया है । धर्मवीर भारती ने राधा-कृष्ण के प्रेम को आधुनिक भाव-बोध के स्तर पर

~~किसन-मवक-है~~ चित्रित किया है — `बिना मेरे कोई भी कैसे अर्थ निकाल पाता। तुम्हारे इतिहास का। शब्द, शब्द,शब्द। राधा के बिना।सब।रक्त के प्यासे।अर्थ ही न शब्द।[१९७] इस प्रकार नयी कविता में मिथकों का प्रयोग परिवेश, चिर-परिचित उपकरणों, यथार्थ अनुभूतियों से युक्त काव्य वस्तु के शरीरी अंग के रूप में तथा विभिन्न अर्थच्छायाओं, क्रियाओं, मनोदशा तथा विभिन्न सन्दर्भों को नया दृष्टिकोण प्रदान करने के लिए हुआ है। बालकृष्ण राव के `एक बेकार आदमी से ` शीर्षक सानेट में मिथकों का सशक्त प्रयोग हुआ है।[१९८] नयी कविता में मिथकों के रूप में अधिकतर कवियों ने लाल रवि, यन्त्र गरुण तथा सांप, सूरज और सागर, सागर फेन, रीटी लाल निशान, उषा-सूर्योदय, मौन, अक्षयवट, वृहद्कुम्भ, वृहद् पर्व, सागर और नाव,[१९९] प्रज्वलित कमल, शक्ति पुरुष, ब्रह्मराक्षस, औरांग-उटांग, जनतन्त्री वानर, ~~शक्ति-पुरुष~~, लकड़ी का रावण, टेढ़ा मुंह चांद, घूग्घू, डूबता चांद, राक्षस बालक, ~~बु~~ वसुदेव महाकंस, पन्नादाई, शिवाजी, तुलसीदास, दण्डक-वन, लंका पुराना मकान, उदासी से पुती गायें, अर्जुन, इड़ा-पिंगला-सुषुम्ना-कुण्डलिनी-कमलिनी, मां[२००] धूप[२०१], पांचाली[२०२], गूंगे -पद-चिन्ह[२०३], टूटा पहिया चक्रव्यूह, अभिमन्यु[२०४], वटपत्र, बैसाखियां, गाण्डीव, जुए का पांसा[२०५], बर्फीला शिखर, बांझ कामधेनुएं, क्रुद्ध वृषभ, लाक्षागृह, विदुर, सुरंग, अर्द्धभस्म-देवदारु, अग्निकमल[२०६], एकलव्य साध, ऊसर भूमि, अर्ध विराम, मेंढ़, चूहा, टूटे पहिए, दबा हुआ हाथ, जली हुई मुट्ठियां, कटे हुए अंगूठे[२०७], चमकीली शिलाएं, क्रानिक मरीज, मकड़ी का जाल, महामेघ, चांदनी, धूप, सूरज का पहिया तथा सूरज के चक्र[२०८], पहिया, पंख[२०९], चक्रव्यूह, अभिमन्यु, टूटा हुआ पहिया, और फूटा कवच[२१०], अगस्त्य, नकली सच्चाई, घाटी, सूरज[२११], चन्द्रमा, शिला, धूप, खत इत्यादि प्रयुक्त किया है। इसके अतिरिक्त कवियों ने शिखण्डी,द्रौपदी,

गान्धारी, युधिष्ठिर, एकलव्य, अश्वत्थामा, द्रोणाचार्य, संजय, आदम-हव्वा, क्रौंच, बाल्मीकि, सावित्री आदि मिथकों द्वारा सौन्दर्य की व्यंजना की है। इतना ही नहीं अधकचरे लोगों, शोषित मजदूरों, किसानों, श्रमजीवी क्लर्कों, वर्तमान युग की विडम्बना तथा आज की मजबूरियों से घिरे व्यक्ति की टूटन को मिथकीय संयोजना द्वारा महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान किया है।

प्रतीक विधान :

कवि के हृदय में अव्यक्त अनुभूतियां एवं तरल संवेदनाएं विद्यमान होती हैं अनेक प्रकार के गूढ़ विचार उमड़ते-घुमड़ते रहते हैं। दैनिक परिचर्या, घर-गृहस्थी, लेन-देन का काम सामान्य भाषा से चल जाता है परन्तु जहां हृदय में छिपी हुई अव्यक्त सूक्ष्म अनुभूतियों, जीवन के विविध सौन्दर्य एवं गूढ़ रहस्यों को दूसरे तक पहुंचाने का सवाल है वहां पर प्रतीकों की भाषा का सहारा लेना पड़ता है। प्रतीक शब्द की व्युत्पत्ति (प्रति + इण (गतौ) 'प्रति' पूर्वगमनार्थक 'इण' धातु से मानी जाती है। (प्रति+इण+क्वण+स्वार्थेन) प्रति इण(गतौ) में इण शेष रह जायेगा, क्विप प्रत्यय और दीर्घीकरण से प्रतीक बन जाता है फिर स्वार्थे 'कप' प्रत्यय के योग से प्रतीक शब्द सिद्ध होता है। इस सिद्धि के अनुसार प्रतीक का अर्थ हुआ, वह वस्तु जो अपनी मूल वस्तु में पहुंच सके अथवा वह मुख्य चिन्ह जो मूल का परिचायक हो।[२१२] विश्व कोश में प्रतीकों का शाब्दिक अर्थ अवयव, अंग, पताका, चिन्ह, निशान बताया गया है।[२१३] अमर कोश में दी गयी व्याख्या के अनुसार प्रतीक का अर्थ अंग, अवयव और कलेवर आदि से लियाजाता है।[२१४] संस्कृत साहित्य में वैदिक[२१५] एवं उपनिषद् काल से

ही प्रतीकों का प्रचुर प्रयोग होता रहा है परन्तु काव्य शास्त्रियों ने आगे चलकर इसे अलंकारों के अन्तर्गत समाहित कर लिया । अलंकारवादी आचार्यों के बाद कुछ आचार्यों का ध्यान शब्द शक्तियों पर गया तब लक्षणा से काम लिया जाने लगा । कविता में जहां भी भाषा प्रतीकात्मक होगी वहां लक्षणा होगी और जहां लक्षणा होगी वहां गूढ़ सन्दर्भों के प्रकाशन में प्रतीकों का हाथ होगा । कैलाश वाजपेयी के अनुसार -'आदिकाल से ही भाषा के दो प्रकार मान लिये गये हैं । संकेतात्मक तथा बिम्ब विधायक। आगे चलकर चित्रभाषा ने बिम्ब विधायक भाषा का स्थान ग्रहण कर लिया । भाषा को चित्रमय बनाने में जो उपकरण सहायक हो सकते हैं भारतीय काव्य शास्त्र में वे साधन तीन माने गये हैं — लक्षणा शक्ति- (जिसमें प्रतीक पद्धति भी सम्मिलित है), मानवीकरण, विशेषण विपर्यय। [२१६] प्रतीकों का प्रयोग 'पश्चिम में चित्रकला, शिल्प या स्थापत्य कला में फूल-पत्ती, पशु-पक्षी, त्रिकोण, चतुर्भुज आदि आकार केवल अलंकरण की भांति प्रयुक्त होते हैं, परन्तु पूर्व में ये केवल अलंकरण नहीं हैं, बल्कि इनके पीछे ध्वनि है, संकेत है, प्रतीक है, अर्थ है संकेत समझे बिना जब तक गूढ़ अर्थ समझ में न आए, तब तक इन्हें निरे अलंकरणों के रूप में ग्रहण करना अन्याय है। [२१७] कविता में जब सामाजिक विसंगतियों एवं विषमताओं को अभिव्यक्ति मिलती है तो कविता में प्रतीकों की दशा बदल जाती हैं भाषा उल्टी एवं विरोध मूलक हो जाती है, इसमें विरोध, विषम, विभावना, असंगति आदि विरोधवर्गीय अलंकारों का हाथ रहता है,साधनात्मक रहस्यवाद की उलटवासियां, धूमिल की उलटवासियां विरोधमूलक प्रतीकों को जन्म देती हैं ।

अत: प्रतीक लक्षणा को ही नहीं वक्रोक्ति सम्प्रदाय को भी अपने

अन्तर्गत समाहित करने की क्षमता रखते हैं। इस दृष्टि से उपचार वक्रता, प्रतीक, लक्षणा एक ही कोटि में आ जाते हैं। आचार्य भरत मुनि ने अलंकारों के अतिरिक्त नाट्य और काव्य के उपादान के रूप में ३६ लक्षणों की विवेचना की है।[२१८] उन ३६ लक्षणों में एक मनोरथ है जिसका अर्थ हुआ 'हृदय-स्थित किसी गूढ़ अर्थ के बोधक भाव का अन्यापदेशों द्वारा कथन।[२१९] हिन्दी साहित्य में अन्यापदेश ही अन्योक्ति के रूप में व्यवहृत हुआ। अन्यापदेश या अन्योक्ति में अप्रस्तुत अथवा प्रतीक द्वारा ही प्रस्तुत का प्रतिपादन होता है और प्रस्तुत सदा व्यंग्य रहता है। भामह ने काव्य में प्रस्तुत की इस स्थिति को अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार का एक भेद माना है और दण्डी ने समासोक्ति। मम्मट आदि ने भामह का अनुसरण किया। परन्तु रुद्रट ने इसे अन्योक्ति कहकर स्वतंत्र सत्ता प्रदान की। इस अन्योक्ति पद्धति पर गहराई से विचार किया जाय तो समस्त प्रतीक पद्धति अन्योक्ति के अन्तर्गत समाहित हो जायेगी। प्रतीक का यौगिक अथवा रूढ़ अर्थ जो भी हो, इसका अधुनातन अर्थ फ्रान्स में उद्भूत तथा समस्त पाश्चात्य साहित्य में प्रकंपित प्रतीकवाद से प्रभावित है। जब प्रस्तुत पर अप्रस्तुत का अभेदारोप हो और प्रस्तुत स्वयं निगीर्ण रहे तब अप्रस्तुत ही प्रस्तुत का स्थानापन्न प्रतीक का काम करता है। काव्य भाषा में प्रतीक हमें गुणी द्वारा गुण तक पहुँचाता है। शास्त्रीय भाषा में इसे हम व्यंग्य रूपक, अध्यवसित रूपक अथवा रूपकातिशयोक्ति कह सकते हैं। प्रतीक कविता में लक्षणा का आश्रय न लेकर जब सीधा व्यंजना द्वारा प्रस्तुत की अभिव्यक्ति कराता है तब वह अप्रस्तुत प्रशंसा का विषय बन जाता है। सूक्ष्म और रहस्यमय वस्तु का ज्ञान कराने के लिए साहित्य में प्रतीकों का सहारा लेना पड़ता है। इसके विपरीत संकेत समासोक्ति का निर्माण करते हैं। प्रतीक और संकेत के मध्य 'जब परोक्ष या अज्ञात वस्तु का चित्रण किया जाता है तब उस चित्र को प्रतीक कहा जाता है और जब किसी प्रत्यक्ष किन्तु सूक्ष्म और भावात्मक सत्ता का चित्रण किया जाता है तब संकेत

होता है। इसी तरह संकेत शब्द का साधारण अर्थ इशारा होता है, यद्यपि काव्य शास्त्र में यह शब्द अर्थ के साथ साक्षात् सम्बन्ध के लिए रूढ़ है।[२१८]

प्रतीक काव्य भाषा का महत्वपूर्ण उपादान है। प्रतीक अब अलंकार मात्र न रहकर स्वतन्त्र रूप से शिल्प तत्व कहलाने लगा है। नयी कविता में प्रयुक्त प्रतीकों पर फ्रांस के प्रतीकवादी कवियों का प्रभाव है। फ्रांस के प्रतीकवादी कवियों पाउण्ड-इलियट और यीट्स ने ध्वनि-अर्थ-गर्भ संकेतों मित कथन, असम्बद्ध बिम्ब एवं प्रतीक विधान के पीछे मनोवैज्ञानिक एकता, एवं काव्यानुभूति की समग्रता की शैली अपनायी।[२१९] बुद्धि को जीवन के रहस्यमय तत्वों के प्रकाशन में असमर्थ पाकर प्रतीक वादियों ने इसे आन्दोलनात्मक रूप दे दिया। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार 'प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य वस्तु के निमित्त होता है जो मनुष्य मस्तिष्क के समक्ष किसी अप्रस्तुत वस्तु के सादृश्य को अपने सम्बंध सूत्रों के माध्यम से व्यक्त करता है।[२२०] अदृश्य ~~इसके~~ वस्तु के दृश्य संकेत कहकर वैबस्टर ने प्रतीक की मूल प्रकृति का परिचय दिया है।[२२१] जार्ज वैली ने प्रतीक के अन्तर्गत बिम्ब, प्रतीक और उपमान सभी को समाहित कर लिया है।[२२२] डा० रामअवध द्विवेदी ने प्रतीकों का उद्देश्य समानता या सादृश्यता तक सीमित न करके अनुभूति का विषय बताया है।[२२३] प्रतीकों का प्रयोग प्रस्तुत को अधिक भाव-व्यंजक बनाने के लिए किया जाता है। हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार 'प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य अथवा गोचर वस्तु के लिए किया जाता है जो किसी अदृश्य, अगोचर या अप्रस्तुत विषय का प्रतिविधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है। अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर की समानुरूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करनेवाली

वस्तु प्रतीक है । अमूर्त अदृश्य, अश्रव्य, अप्रस्तुत विषय का प्रतीक विधान मूर्त, दृश्य, श्रव्य, प्रस्तुत विषय द्वारा करता है ।[२२४] प्रतीक भाषा का ऐसा क्रिया-व्यापार है जो शब्द की लक्षणा और व्यंजना शक्तियाँ पर आधारित होता है । इसलिए उसमें अर्थ की अनन्त संभावनाएं होती हैं । वस्तुत: कविता में प्रस्तुत को स्पष्ट करने के लिए अप्रस्तुत की योजना की जाती है और यही अप्रस्तुत उपमान कहलाता है । प्रतीकों का प्रयोग प्रस्तुत को अधिक भावाभिव्यंजक बनाने के लिए किया जाता है । 'प्रतीक वस्तुत: अप्रस्तुत की समस्त आत्मा या धर्म या गुण का समन्वित रूप लेकर आनेवाले प्रस्तुत का नाम है । प्रतीक अप्रस्तुत का प्रस्तुत रूप में अवतार ही है ।[२२५] उपमान ही अपने ताजे रूप में बिम्ब और पुराने रूप में प्रतीक बन जाता है, जब वह यह देखता है कि बिम्ब घिसकर प्रतीक बन गया है यानी नये और ताजे अर्थों का सन्दर्भ गायब हो गया है तब वह फिर से जीवन और जगत के बीच नये अर्थ बोध की साधना करता है और नये रूप से उसकी संवेदना बिम्ब रूप में प्रकट होती है ।[२२६] बिम्ब अपने नये रूप में उपमान होता है और पुराने रूप में प्रतीक बन जाता है । प्रतीक अप्रस्तुत वस्तु को, अप्रस्तुत भाव सन्दर्भ को किसी गुण विशेष के कारण उभार कर रख देता है । कविता में जब किसी वस्तु का साम्य रूप या अलंकार रूप स्पष्ट होगा तब उपमान होगा और जब संकेत चिन्ह, घटना, गुण विशेष का प्रतिनिधित्व करेगा तब प्रतीक कहलायेगा । आचार्य शुक्ल के अनुसार 'प्रतीक का आधार सादृश्य या साधर्म्य नहीं बल्कि भावना जगाने की निहित शक्ति है । पर अलंकार में उपमान का आधार सादृश्य ही माना जाता है । अत: सब उपमान प्रतीक नहीं होते पर जो प्रतीक उपमान होते हैं वह काव्य की बड़ी अच्छी सिद्धि करते हैं ।[२२७] प्रतीक विधान बिम्ब विधान की

उल्टी दिशा में क्रियाशील होकर वही कार्य करता है जो बिम्ब विधान करता है। प्रतीक विधान अमूर्तन की क्रिया है। भाषा की मूल प्रकृति भी अमूर्तन है।[२२८] इस प्रकार काव्य भाषा में प्रतीकों का बहुत बड़ा महत्व है। कवि के मनोभावों, उसके गूढ़ विचारों को उजागर करने का काम प्रतीक ही करते हैं।

नयी कविता : प्रतीकों के नये प्रयोग

नयी कविता पर फ्रान्स के प्रतीकवाद का प्रभाव है। नयी कविता की भाषा चेतना पाल वैलरी, रिम्बो, और मलार्मे की प्रतीक योजना से समृद्ध हुई है। पूर्ववर्ती काव्य की तुलना में नयी कविता में प्रतीकों के प्रयोग में काफी वैविध्य दृष्टिगोचर होता है। नयी कविता के कवियों ने किसी की हंसी उड़ाने, किसी के दिल की भंडास निकालने, किसी पर आक्रोश दिखाने, किसी पर व्यंग्य की छींटाकसी करने के लिए सूर्य, चन्द्र, ~~तथ~~ पृथ्वी, समुद्र, हंस, कमल, कोयल आदि पृथ्वी के सद्-उपकरणों अथवा इसके विपरीत जुगनू, नाला, कीट, कौआ, गीदड़, कुत्ता, भेड़िया, गिद्ध आदि असद उपकरणों का प्रतीक रूप में सहारा लिया है। नयी कविता में सांस्कृतिक, पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, साहित्यिक, प्राकृतिक, वैज्ञानिक एवं यौन प्रतीकों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। सांस्कृतिक एवं पौराणिक प्रतीक पौराणिक काल के पात्रों के माध्यम एवं विभिन्न संस्कारों के माध्यम से जुड़कर आधुनिक नये युग की संघर्षमयी अभावशील विवशता से भरी जिन्दगी का चित्रण करते हैं। वास्तव में ये मिथक हैं चूंकि मिथक से सम्बंधित घटनाओं, पात्रों एवं उसके निष्कर्षों का प्रयोग

प्रतीकों में हुआ है । अत: ऐसी पंक्तियों को यहां मिथ के अन्तर्गत न लेकर उनमें प्रयुक्त प्रतीकों के विवेचन का आधार बनाना उचित होगा । इसके पहले मिथकों का विवेचन किया जा चुका है । पौराणिक प्रतीकों में चक्रव्यू, अभिमन्यु, गान्धारी, धृतराष्ट्र, कुंती, कर्ण आदि अत्यन्त लोकप्रिय प्रतीक हैं ।

'गर्भवती है -
मेरी कुंठा क्वारी कुन्ती
बाहर आने दूं तो लोकलाज मर्यादा
भीतर रहने दूं तो घुटन सहन से ज्यादा

\+ \+

ओ स्वर निर्झर बहो कि तुममें
गर्भवती अपनी कुंठा का कर्ण बहा दूं ।[२२९]

यहां 'क्वारी कुन्ती' व्यक्ति मन की कुंठा का तथा कर्ण अन्याय का प्रतीक बनकर आया है । यह कुंठा का पुत्र हमेशा। कौरव दल की ओर रहेगा । और लड़ेगा।[२३०] कौरवदल असत्य का प्रतीक है । नयी कविता में आये अन्य पौराणिक प्रतीक धृतराष्ट्र[२३१], लाक्षागृह[२३२], बृहन्नला, परीक्षित नाग एवं जन्मेजय[२३३], दक्षयज्ञ, दधीची की हड्डियां[२३४], सम्पाति[२३५], शम्भुधन[२३६], कालियदह,कालियनाग[२३७], अर्जुन का पौत्र, गाण्डीव[२३८] आदि हैं । नयी कविता में ऐतिहासिक प्रतीकों के भी प्रयोग हुए हैं- आदम का पुत्र बहुत।भटका अंधेरों में। चंगेजी न्यायों के खून भरे घेरों में।[२३९] गिरिजाकुमार माथुर ने 'चंगेज खां' को अन्याय एवं बर्बरता का के प्रतीक रूप में ग्रहण किया है ।

नरेश मेहता की 'समय -देवता' कविता में 'हिटलर' तानाशाही एवं बर्बरता के प्रतीक रूप में आया है ।[240] नयी कविता में प्रकृति के अनेकानेक उपादान प्रतीक बनकर आये हैं । प्रकृति क्षेत्र से गृहीत प्रतीकों में ध्रुव, लाल रवि, घरौंदे, जुगनू[241], सूरज और सागर[242], उषा सूर्योदय, मौन अडा यबट, सागर और नाव[243]; प्रज्वलित कमल, टेढ़ा मुहं चांद, डूबता चांद, दण्डक-वन[244], धूप[245], बर्फीला शिखर, अर्द्धभस्म देवदास, अग्निकमल, चमकीली शिलाएं, चांदनी, धूप, सूरज का चक्र, सूरज का पहिया[246], घाटी, शिला, धूप, खेत[247], अन्धी घाटी[248] इत्यादि सशक्त प्रतीकों के प्रयोग का नयी-कविता में बोलबाला है । नयी कविता में नदी कविता में नदी का प्रतीक गतिशील व्यक्ति एवं कर्मठ व्यक्ति का प्रतीक है --

नदियों ने चलकर ही
सागर का रूप लिया
मेघों ने चलकर ही
धरती को गर्भ दिया ।[249]

नयी कविता में सांप,[250] छिपकली, ~~मिमि~~ गिरगिट, जहां पर समाज के पूंजीपति एवं राजनेताओं के प्रतीक बनकर आये हैं । वहीं पर मेंढक सम-सामयिक चिन्तन और मानवता की अनुभूति को जाग्रत करनेवाले प्रतीक हैं —

एक सरकण्डे की गाड़ी है
जिसमें मुढ़क जुते हैं
हंसो मत-
इन सरकण्डों की पोल में
इस युग के विश्वासों को शक्ति की स्थिरता है।[251]

नयी कविता में वैज्ञानिक बिम्बों की अपेक्षा वैज्ञानिक प्रतीकों का अभाव है। यद्यपि कुछ कवियों की कविताओं से वैज्ञानिक प्रतीकों के अच्छे उदाहरण मिल जाते हैं। गिरिजाकुमार माथुर ने 'एटम' और 'बारूद' तथा गोलों को विनाश का प्रतीक बताया है।[२५२] सर्वेश्वर ने युद्ध की प्रवृत्ति पर व्यंग्य कसते हुए अनेक वैज्ञानिक प्रतीकों का प्रयोग किया है -

बौद्ध भिक्षुओं के गैरिक वसनों को न भूलना
क्योंकि उन ढीले चोगों के नीचे
बड़ी- बड़ी 'आटोमैटिक राइफलें' तक
आसानी से छिपायी जा सकती हैं।[२५३]

यहां बौद्ध भिक्षु शान्ति के प्रतीक हैं तथा 'आटोमैटिक राइफलें' विध्वंस का प्रतीक हैं। भारत भूषण अग्रवाल की कविता में 'विलायती स्पंज' मध्यम वर्ग के निरे बुद्धिजीवी व्यक्ति का प्रतीक है।[२५४] वहीं पर सर्वेश्वर की कविता में 'क्लोरोफार्म' मस्ती और मादकता का प्रतीक है —

जिसकी जवानी
खुद जिसके लिए 'क्लोरोफार्म' का
एक मीठा नींद भरा हल्का झोंका है।[२५५]

नयी कविता में 'यौन प्रतीकों' के प्रयोग अधिकांशत: प्रकृति के सहारे चित्रित हुए हैं। नयी कविता में फ्रायड आदि के प्रभाव के अतिरिक्त यौन प्रतीक आधुनिक युग की एक प्रवृत्ति विशेष के बोधक बनकर आये हैं।

ये प्रतीक मानव मन की दमित कुंठाओं एवं वासनाओं को उभारने के लिए प्रयोग में लाये गये हैं। अज्ञेय, धर्मवीर भारती, शमशेर, गिरिजाकुमार माथुर, भारत भूषण अग्रवाल, इन्दु जैन, धूमिल, जगूड़ी, राजकमल चौधरी आदि की कविताओं में यौन प्रतीकों की सफल योजना हुई है। इन्दु जैन के 'चौंसठ कविताएं' काव्य संकलन में प्राकृतिक उपकरणों के माध्यम से शत-प्रतिशत यौन प्रतीक ही उभर कर आये हैं। अज्ञेय की 'सावन मेघ', जब पपीहे ने पुकारा' 'सागर किनारे' जैसी कविताओं में यौन प्रतीकों को देखा जा सकता है। 'सो रहा है फांप अंधियाला' में चांदनी उप नायिका का प्रतीक है —

> सो रहा है, फांप अंधियाला'
> 'नदी' की जांघ पर
> डाह से सिहरी हुई यह 'चांदनी'
> चोर पैरों से उफक कर
> फांक जाती है। २५६

धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया' और 'ठण्डा लोहा' में अधिकांश यौन प्रतीकों के प्रयोग मिलते हैं। 'कनुप्रिया' का सारा आग्रह मांसल भावनाओं और अतृप्त कुंठाओं पर है। भारत भूषण अग्रवाल की कविता में बिजली, मेघ, नीर जैसे भी प्रतीक यौन प्रतीकों के अन्तर्गत आये हैं। इन्दु जैन की कविताओं में 'काला भौंरा' और कमल कली यौन प्रतीक के रूप में आये हैं।

> मैं देखा- जाने कैसे
> 'काला भौंरा'
> 'कमलकली' की कैद
> भोर से पहले उड़ आया था। २५७

नयी कविता के घिनौने प्रतीक अधिकतर यौन प्रतीक से सम्बद्ध हैं। नयी कविता में कुछ ऐसे भी प्रतीक प्रयोग में लाये गये हैं जो अविश्वास और अनास्था की सीमा को पार कर गये हैं जो आधुनिक सामाजिक विसंगतियों एवं कुण्ठाग्रस्त मनुष्य की पीड़ा को अभिव्यक्ति देने में समर्थ हुए हैं। इस प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग नयी कविता से सम्बद्ध काव्यान्दोलनों के सभी कवियों में देखा जा सकता है। कुछ कवियों ने तो अभद्र एवं निरर्थक प्रतीकों का सहारा लिया है —

मैं हूं वह पदाक्रान्त रिरियाता कुत्ता। [२५८] में रिरियाता कुत्ता समाज द्वारा पदाक्रान्त, शोषित एवं कुण्ठाग्रस्त व्यक्ति का ही प्रतीक है। 'यह कली, फुटपुट अंधेरे में। पली थी देहात की गली में। भोली-भाली। नगर के राजपथ दिपते। प्रकाश में गयी छली। [२५६] यहां कली ग्रामीण सुन्दरी का प्रतीक है। यहां नगर, चालाकी और छली कपट, धोखेबाजी या बलात्कार के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। 'अगर कहीं मैं तोता होता' में कवि ने तोते को स्पृहणीय और रक्षणीय वस्तु का प्रतीक माना है। साथ ही तो फिर क्या होता कहकर आधुनिक मूल्यहीनता की ओर संकेत करना चाहा है। [२६०] वस्तुतः ये प्रतीक कवि की कुण्ठित मनःस्थिति के द्योतक हैं।

नयी कविता के कवियों में प्रतीकों की सर्वाधिक सफल योजना धर्मवीर भारती की रही है। भारती के प्रतीकात्मक प्रसंग अपनी स्थूल घटनात्मक स्थिति से परे गूढ़ अर्थों को व्यंजित करते हैं। 'अन्धा युग' के सभी पात्र किसी न किसी प्रवृत्ति के प्रतीक बनकर आये हैं। 'धृतराष्ट्र'

मोहान्धता, विवेकशून्यता के प्रतीक हैं। `गान्धारी` आहत मातृत्व की, संजय निष्क्रिय तटस्थ द्रष्टा का, अश्वत्थामा` प्रतिहिंसा जनित बर्बरता के प्रतीक हैं। `कृष्ण` सर्वव्यापी सत्य और मानव भविष्य के प्रतीक हैं।[२६०] शब्द प्रतीकों में `अंधों से शोभित था युग का सिंहासन[२६१] अन्दर केवल दो बुझती लपटें बाकी, मेरे अंधापन से तुम थे उत्पन्न पुत्र, ज्योति बुझ रही है वहां` आदि के सफल प्रयोग देखे जा सकते हैं। आगे चलकर युवा कवियों की रचनाएं आक्रोश, घृणा, लाचारी, ऊब आदि को अभिव्यक्ति देने में सफल हुई हैं। इन कवियों ने सांप, बिच्छू, रीछ, कुत्ते, चिमगादड़, बन-बिलाव, मकड़ी, गौरिल्ले आदि को प्रतीक बनाकर घृणा, भय, आक्रोश आदि भावनाओं को व्यक्त किया है।[२६२] अजगर को प्रतीक बनाकर व्यवस्था की भयानकता और मजबूती को व्यक्त किया गया है।[२६३] जनता और शासक के रिश्ते को भेड़ और भेड़िया का प्रतीक इन कवियों ने पहनाया है।[२६४] जहां पर आग का गोला क्रान्ति का प्रतीक है वहीं कौवों का कांव-कांव क्रान्ति को भंग पहुंचाने वाली प्रतिगामी शक्तियों का प्रतीक है।[२६५] इन कवियों ने सामाजिक जीवन में व्याप्त अराजकता, बेईमानी को प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया है। स्वर्गस्थ प्रधानमन्त्री को भारत भूषण अग्रवाल ने रानी मक्खी का प्रतीक बनाकर उन लोगों के घावों की ओर संकेत किया है जिनके खुशियों और सुखों की कीमत पर चंद लोग मजे ले रहे हैं।[२६६] इन कवियों के यौन प्रतीक अज्ञेय आदि कवियों की अपेक्षा खुले हुए अधिक हैं। रोई रात जी भर। मोती को दबाये। चमक को निगलती सीप की परतें[२६७] में `सीप` की परतें योनि का प्रतीक है।

> रात भर एक तन हीन टांग तम्बूरे को बजाती रही।
> सेवों की जोड़ी बिस्तरे पर रखी हुई। छिद्रित मोम को हाथ से
> छूते हुए। सिर झुकाए खड़ा कोई[२६८]

प्रस्तुत पंक्ति में सेवों की जोड़ी स्त्री के स्तनों के प्रतीक हैं।

एक छोटा-सा गिरगिट कभी- कभी मारता है मुंह और। नोच लेता है बाल। केवल कसमसाती हैं खाल और तन जाती है रानें। शेष रह जाता है अंधकार, एक काला लाल जीभवाला बकासुर खोलता है मुंह और। लीलता है गर्दनें और कंधे और वक्ष।[२६६]

प्रस्तुत पंक्तियों में बकासुर योनि का प्रतीक है। गिरगिट पुरुष-लिंग का। इन प्रतीकों के द्वारा युवा पीढ़ी के नये कवियों की घृणा और वितृष्णा प्रतीकों के द्वारा व्यंजित हुई है। स्त्री के प्रति आकर्षण और विकर्षण इन कवियों में दोनों विद्यमान हैं। इस प्रकार युवा नये कवियों के यौन प्रतीक पहले के कवियों की अपेक्षा प्रकृत्या भिन्न हैं। इन उदाहरणों से साफ जाहिर है कि प्रतीकों ने भाषा को एक नई चेतना दी है। नई कविता की सारी अर्थवत्ता इन प्रतीकों में गुंथी हुई जब तक इस गांठ को हम खोलने का प्रयास नहीं करते तब तक नई कविता की भाषा चेतना के असली मर्म तक हम नहीं पहुंच पायेंगे।

भाषा का प्रतीकात्मक एवं लाक्षणिक प्रयोग

प्रतीक सत्य के जिस स्तर का उद्घाटन करता है।[२७०] और अन्यापदेश या अन्योक्ति हृदयस्थिति किसी गूढ़ अर्थ के बोधक भाव को जिस स्तर पर उभारती है[२७१] उसी स्तर पर लक्षणा भी छिपे हुए गूढ़ एवं अन्यार्थ की प्रतीति कराती है। भारतीय काव्य शास्त्रियों ने लक्षणा को अर्पिता शक्ति

कहा है। मम्मट ने भी लक्षणा को आरोपिता क्रिया बताया है। उनके अनुसार 'मुख्यार्थ में बाधा पहुंचने, मुख्यार्थ का योग होने तथा रूढ़ि अथवा प्रयोजन जिससे अन्य अर्थ की प्रतीति होती है या अन्य अर्थ लक्षित होता है उसे लक्षणा कहते हैं। लक्षणा शक्ति को भारतीय काव्य शास्त्र में पूरा महत्व दिया जा ता रहा है। अलंकार रत्नाकर के रचयिता शोभाकर मिश्र ने इसे काव्य भाषा के प्राण तत्व के रूप में स्वीकार किया है।[२७३] डा० नगेन्द्र ने डबल्यू के विमसाट के मत का स्पष्ट उल्लेख करते हुए कहा है कि 'काव्य अन्तत: लक्षणा पर आधारित होता है और प्रतीकात्मक होता है।[२७४]

बदलती हुई प्रवृत्तियों एवं काव्य संवेदना के साथ काव्य के उपादान भी बदलते रहते हैं। अत: पूर्णतया यह नहीं सिद्ध किया जा सकता कि लक्षणा और प्रतीक एक ही हैं परिन्तु जहां प्रतीक होगा वहां लक्षणा अवश्य होगी। जिस प्रकार हम प्रतीक को व्यंग्य रूपक, अध्यवसित रूपक, रूपकातिशयोक्ति, अन्योक्ति, अप्रस्तुत प्रशंसा, व्याजस्तुति, आदि अलंकारों के अन्तर्गत समाहित कर सकते हैं उसी प्रकार लक्षणा और उसके अवान्तर भेदों को इन विविध अलंकारों के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है। कुंतक ने लक्षणा के समस्त प्रपंच को उपचार वक्रता के अन्तर्गत समाहित कर लिया है। उपचार विश्वनाथ के शब्दों में 'बिलकुल विभिन्न दो पदार्थों के मध्य परस्पर सादृश्यातिशय की महिमा के भेद-प्रतीति के स्थगन को कहते हैं जैसे अग्नि और ब्रह्मचारी में।[२७५] यहां पर यह गौणी लक्षणा का विषय है यह उपचार वक्रता के साथ-साथ गौणी लक्षणा का भी उदाहरण हो सकता है। लक्षणा वस्तुत: अर्थनिष्ठ शक्ति है इसे शब्द शक्ति इसलिए कहा गया है कि शब्द के मूल में अर्थ निहित

होता है और समस्त अर्थ व्यापार शब्द व्यापार से ही परिचालित होता है। संस्कृत आचार्यों ने कुल मिलाकर लक्षणा के ८० भेद गिनाये हैं। रामदहिन मिश्र ने लक्षणा को दस विभागों में बांटा है - (१) प्रतीकों के रूप में (२) साम्य के रूप में (३) मूर्त के लिए अमूर्त के रूप में (४) आधार के लिए आधेय के रूप में (५) मानवीकरण के रूप में (६) विशेषण विपर्यय के रूप में (७) कार्य-कारण के रूप में (८) व्यंग्य-व्यंजक के रूप में(९)उपादान के रूप में(१०) विरोध मूलक शब्दों के प्रयोग में। [२७६] मिश्र जी का यह वर्गीकरण समीचीन इसलिए नहीं है कि लक्षणा की अपेक्षा अलंकारों का वर्गीकरण किया गया है। पहले भेद को छोड़कर समस्त भेद अलंकारों में ही घुले मिले प्रतीत होते हैं। मिश्र जी के इस वर्गीकरण के अन्तर्गत प्रतीक विधान, उपमान विधान तथा समस्त अलंकार विधान समाहित हो जाते हैं। आचार्य शुक्ल ने लक्षणा के प्रमुख चार भेदों का ही उल्लेख किया है —

(१) रूढ़ा लक्षणा और प्रयोजनवती लक्षणा।
(२) उपादान लक्षणा और लक्षण लक्षणा।
(३) सारोपा और साध्यवसाना लक्षणा।
(४) गौणी लक्षणा और शुद्धा लक्षणा।

प्रयोजनवती लक्षणा के अन्तर्गत लोकोक्ति एवं मुहावरे आ जाते हैं। रूढ़ि लक्षणा तो प्राय: कहावतों एवं मुहावरों के रूप में प्रयुक्त होती है। दर असल लक्षणा के दो ही मुख्य भेद माने गये हैं - गौणी लक्षणा और शुद्धा। जहां पर अभिधेयार्थ के साथ सादृश्य सम्बन्ध के कारण अर्थान्तर का बोध होता है वहां गौणी लक्षणा होती है और जहां पर अभिधेयार्थ के साथ सादृश्य से भिन्न सम्बन्ध के कारण अर्थान्तर का बोध होता है वहां

शुद्धा लक्षणा होती है। सिंह और मनुष्य में बलशालिता, निर्भीकता आदि समान गुण यदि मिलें तो गौणी लक्षणा होगी। 'गंगायां घोषः' गंगा में झोपड़ी गंगा के प्रवाह और तीर में सादृश्य बजाय सामीप्य होने के कारण 'गंगा' शब्द की तीर अर्थ में लक्षणा होती है। सादृश्येतर सम्बन्ध होने के कारण यहां शुद्धा लक्षणा होगी। 'हैं टोपी' स शब्द की लक्षणा गांधी टोपी पहनने वाले व्यक्ति में है, जो उस शब्द का लक्ष्यार्थ है। इस प्रकार की लक्षणा में जहां लाक्षणिक पद का अभिधेयार्थ लक्ष्यार्थ का एक अंग या उपादान बन जाता है वह अजहत्स्वार्था या उपादान लक्षणा कही जाती है। 'गंगा में मकान' इस वाक्यांश में गंगा का अभिधेयार्थ जल प्रवाह है और लक्ष्यार्थ तीर है, लक्ष्यार्थ के भीतर अभिधेयार्थ का कोई समावेश नहीं है अर्थात् लाक्षणिक पद का अभिधेयार्थ लक्ष्यार्थ में त्याग दिया गया है। इस प्रकार के उदाहरण जहत्स्वार्था अर्थात् लक्षण लक्षणा के उदाहरण माने गये हैं। 'ये गांधी टोपियां आ रही हैं, में गांधी टोपी लाक्षणिक शब्द है जिसका लक्ष्यार्थ है गांधी टोपी पहनने वाला व्यक्ति, ये व्यक्तिवाचक सर्वनाम भी प्रयुक्त हुआ है। अतः इसे हम सारोपा लक्षणा का उदाहरण कह सकते हैं। 'गंगा में मकान' गंगा जितना ही पवित्र है क्योंकि निरन्तर जल का स्पर्श होता रहता है। भाले प्रवेश कर रहे हैं, लाठियां प्रवेश कर रही हैं, श्वेत दौड़ रहा है अर्थात् श्वेत रंग का घोड़ा दौड़ रहा है। इस प्रकार के प्रयोग उपादान एवं लक्षण लक्षणा के अन्तर्गत आते हैं। नयी कविता में यदि ढूंढा जाय तो ऐसे बहुत से प्रयोग हुए हैं जिसे उपादान एवं लक्षण-लक्षणा का उदाहरण कहा जा सकता है —

कहीं आग लग गयी कहीं गोली चल गयी।[२७७] भौंकते हुए शहर का हड़कम्प, आसमान के सिर पर, दीवारें रुक गयीं शहर दौड़ने लगा[२७८] सुनो-सुनो यहीं कहीं एक ~~कच~~ कच्ची सड़क थी। जो मेरे गांव को जाती थी। नीम की निबौलियां

~~उछलती~~ उछालती। आम के टिकोरे फारती। महुआ, इमली और जामुन बीनती जो तेरी इस पक्की सड़क पर घर-घराती मोटरों और ट्रकों को अंगूठा दिखाती थी।[२७९] चमकते हुए रंगों की चालबाजी[२८०]। सारोपा, साध्यवसाना लक्षणा वहां होती है जहां पर यह बैल है, गधा है, `घी` आयु है, `भांग` स्वर्ग है, आदि का आरोप होता है। नयी कविता में तो ऐसे बहुत ही प्रयोग मिलते हैं - जिस प्रकार `गधा` शब्द मूर्खता का द्योतक है, प्रतीक है उसी प्रकार लक्षणा से यही अर्थ लक्षित होता है। घोषणा-पत्र गधे के मुख में चबता जा रहा है[२८१] मेरे शब्द एक लहरियाता दो गाना बन उकड़ूं बैठे ह लोगों पर भिन-भिनाने लगे।[२८२] मेड़िए को भाई कह रहा हूं, गर्म कुत्ता खा रहे हैं। सफेद घोड़ा पी रहे हैं।[२८३] अक्सर चांद जेब में पड़ा हुआ मिलता है। सूरज को गिलहरी। पेड़ पर बैठ खाती है, आकाश का साफा बांधकर। सूरज की चिलम खींचता बैठा है पहाड़[२८४] मेरे बहर में कुत्ते हड़ताल करते हैं या नारे लगाते हैं[२८५] आदि में सारोपा एवं साध्यवसाना के अच्छे उदाहरण मिल जाते हैं। जब सारोपा एवं साध्यवसाना के भेद सादृश्य द्वारा हों अथवा जन्य-जनकादि किसी और सम्बंध द्वारा हों तो उन्हें क्रमशः गौणी व शुद्धा लक्षणा समझना चाहिए।[२८६] जैसे चरवाहा, मन्द बुद्धि का व्यक्ति। इस प्रकार के प्रयोग को सादृश्य मूलक अलंकारों के अन्तर्गत माना जाता है। वस्तुतः लक्षणा भी काव्य भाषा के आलंकारिक पक्ष से मिली जुली एक स्वतन्त्र पद्धति है जिसे काव्यशास्त्रियों ने अपने मनन-चिन्तन के फलस्वरूप जन्म दिया है। सारोपा एवं साध्यवसाना लक्षणा उसे रूपक अलंकार के स्फुटन को स्वीकार करते हुए विश्वनाथ ने कहा है कि `सारोपा होने का अभिप्राय यह है कि इस प्रकार की लक्षणा आरोप के विषय और उसके विषयी में ऐसा अभेद बतलाया करती है जिसमें विषय का स्वरूप विषयी के द्वारा ढंका-ढंकाया नहीं प्रतीत होता ,यही

लक्षणा वस्तुत: रूपक अलंकार का बीज है ।[२८७] रूपक में आरोप चमत्कार का कारण हुआ करता है इसलिए रूपक को अलंकार कहा जाता है । लक्षणा में वाग्व्यवहार का स्वभाव हुआ करता है । आरोपादभेदे ध्यवसाय: प्रकृष्यते[२८८] इसका कारण यह है कि अध्यवसान में विषय उपमेय और विषयी उपमान पृथक् रूप से निर्दिष्ट नहीं रहा करते । अध्यवसान में विषयी उपमान अपने विषय उपमेय को ऐसे ढक लिया करता है कि विषयी के अतिरिक्त विषय का अस्तित्व ही नहीं रहा करता ।[२८९] यह अध्यवसान उत्प्रेक्षालंकार का बीज है ।[२९०] अलंकारवादियों ने लक्षणा के समस्त प्रपंच को अलंकारों के अन्तर्गत समाहित करने का पूरा प्रयास किया था । वस्तुत: प्रतीक और बिम्ब की तरह लक्षणा भी अलंकारों का ही बीज है । अच्युतराय ने 'साहित्य सार' में समस्त लक्षणा प्रपंच को रूपक, रूपकातिशयोक्ति हेतु अलंकार, व्याजस्तुति आदि अलंकारों के अन्तर्गत समाहित कर लिया है ।[२९१] इन महत्वपूर्ण उद्धरणों एवं विवेचनों से स्वयमेव सिद्ध हो जाता है कि लक्षणा भी बिम्ब एवं प्रतीक, उपमान की तरह अलंकारों से युक्त एक अभिव्यक्ति पद्धति है जो भाषा को बड़ी गहराई एवं बारीकी से समेटने का प्रयास करती है । प्रतीक एवं लक्षणा जब निरन्तर प्रयोग से गुण क्रिया अथवा विरोध बताने में रूढ़ हो जाता है तब उसकी लाक्षणिकता एवं व्यंजकता जाती रहती है और अभिधा ही वहां काम करने लगती है । दण्डी ने उसकी सुन्दरता चुराता है, उससे लोहा लेता है, उसके साथ तराजू पर चढ़ता है, इत्यादि कितने ही मुहावरों-लाक्षणिक प्रयोगों को सादृश्य प्रतिपादन में रूढ़ हो जाने के कारण वाचक ही माना है लाक्षणिक नहीं ।

लोकोक्ति एवं मुहावरे :-

भाषा को मजबूत, प्रभावशाली, एवं आकर्षक बनाने में मुहावरों

का विशेष महत्व होता है। मुहावरों एवं लोकोक्तियों के प्रयोग से कविता की भाषा सजीव हो उठती है। भाषा में निखार आ जाता है। भाषा को नई रवानगी देने कार्य मुहावरे ही करते हैं। नयी कविता के कवियों ने पुराने घिसे-पिटे मुहावरों को नई अर्थवत्ता दी है, जहाँ कहीं भी 'मुहावरों का इस्तेमाल हुआ है नये परिवर्तित रूप में हुआ है। मुहावरों का प्रयोग कुछ कवियों में कम तथा कुछ कवियों में भारी तादाद में मिलता है। कुछ कवियों ने ऐसे मुहावरों का प्रयोग किया है जो आज की विसंगतियों एवं तनाव पूर्ण स्थिति को उभारने में पूर्णतय: सफल हुए हैं। प्राय: नयी कविता के कवियों ने लोकोक्तियों को तोड़-मरोड़कर प्रयोग किया है। न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी' जैसी प्रसिद्ध लोकोक्ति का प्रयोग भवानीप्रसाद मिश्र ने एक नये तरीके से प्रस्तुत किया है —

'कितना नाचा है तुम्हारे इशारों पर
नौ मन तेल तक जुटाया है मैंने
खुद अपने ही लिए[२६३]

नयी कविता में कुछ प्रचलित मुहावरों के भी प्रयोग मिलते हैं - साँचे में ढालना, दबे पाँव आना, कमर झुकना, आँखें फूटना, छप्पर फाड़कर देना, दबे पाँव आना, गला बजाना,[२६४] काँटों में उलझना, मुंह फेरना, अंगूठा दिखाना,[२६५] आँधी खोपड़ी पाना,[२६६] छाती में आग दबाना, घुटने टेक देना, लील जाना, आंखों में चुभना, भाग्य जगना, ब्रह्माण्ड घूमना[२६७], आंखों में अन्धे, कानी कौड़ी न होना, मुंह लटकाये रहना, अधेले की भी पूंछ न होना, दाने-दाने को मोहताज, नेग मांगना, मुंह ताकना, हरा-भरा

देखना, सूखी वालू पर मृग जल देखना,[२६८] बोटी-बोटी काट लेना, खोटी किस्मत, मुंह छिपा लेना, रंग उड़ जाना, गली- गली नापना, हाथ कुछ न लगना,[२६९] सर्वेश्वर ने पुराने मुहावरों और लोकोक्तियों को एक नई अर्थवत्ता देने के साथ-साथ नये मुहावरों को भी गढ़ा है। `नाम गुलबिया चुत्तर फांवा ' जैसी पुरानी लोकोक्ति को भी सर्वेश्वर ने एक नयी दिशा दी है —

जो भी आयेगा
समाजवाद और समानता के नाम की
ईंटें पकायेगा
मनमाने बेडौला सांचों में डालेगा कच्ची मिट्टी
पर बुझा पड़ा रहेगा अवां
नाम गुलबिया चुत्तर फांवा[300]

सर्वेश्वर ने कुछ नये मुहावरों की सृष्टि की है - आकाश छाती से टकराता है। मैं जब चाहूं बादलों में मुंह छिपा सकता हूं। घास की एक पत्ती के सम्मुख मैं झुक गया और मैंने पाया कि मैं आकाश छू रहा हूं। एक पहाड़ निचोड़ता हूं मैं, अब मैं कवि नहीं रहा, एक काला झण्डा हूं, खाली पैट पर चिराग रखना, फिर वसंत ने मुझे डंसा, आकाश का साफा बांधकर। सूरज की चिलम खींचता है पहाड़[३०१]। दुष्यन्त कुमार की कविताओं में दम फूल जाना, सपने टूट जाना, खाल खींचना, आंखें मींचकर उलीचना आदि मुहावरे भाषा को नई अर्थवत्ता देने में सफल हुए हैं।[३०२] पानी उतरना, माथे का दाग जैसे प्रचलित मुहावरों का प्रयोग गिरिजा कुमार माथुर की अपनी -

अलग विशेषता है।[303] सत्य की ताड़ना, सांचे में ढालना, हाथ पसारना, हृदय पसीजना, आंखें झुकाना, आंखें मिलाना आदि मुहावरे एवं कागज की नाव, पिण्ड छुड़ाना, एक म्यान में दो तलवारें, तथा जेब में दो कलमें, जैसी लोकोक्तियों को अपनाया है।[304] `जब तक भीतर से कुछ नहीं उथलता उसकी कमर झुकी रहेगी,[305] सोचा था अंतिम बार अपनी कमर सीधी करने के बारे में, जो मैंने बोया सो काटा, मगर सपनों में ठहर गये जख्मों पर रख दिया नमक, `अच्छा जो पूछते हैं वे पत्थर क्यों नहीं हो जाते।[306] और सपना टूट जाता है। मैं अब गुफा हूं,[307] नन्हें-मुन्ने सपने। जिनके हाथों में अभी खुर नहीं उठे हैं। शायद अब समय आ गया है बहुत धूल है पीछे।[308] जैसे मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग चौथा सप्तक के कवियों ने किया है। सामाजिक परिवेश एवं राजनीति जुड़े हुए मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग नरेन्द्र मोहन धूमिल, रघुवीर सहाय, लीलाधर जगूड़ी, हरि शंकर अग्रवाल, कमलेश, डा० दधीचि आदि की कविताओं में देखा जा सकता है — कविता चाहे चूल्हे भाड़ में जाय[309] पत्थरों से टकराती है हवा। और दांत किट-किटाती हुई कुर्सी के पाये से लिपट जाती है[310] ऊंची दुकान फीका पकवान। गलत - - - - - । नीची दुकान ऊंचा, ऊंचा बहुत ऊंचा स्वर्गिक, आध्यात्मिक, बौद्धिक।[311] नयी कविता के कवियों में धूमिल और जगूड़ी ने सर्वाधिक मुहावरों का प्रयोग किया है। जगूड़ी ने कुछ नये मुहावरों को गढ़ा है और पुराने मुहावरों को एक नई अर्थवत्ता दी है - `बीड़ी और बीवी के बीच माचिस की तरह बजते हुए। कुटुमदारी निबाहते हुए, हाथ धोना, आंखें लाल पीली करना, अंटी ढीली करना[312] जैसे मुहावरों का प्रयोग किया है। धूमिल ने `चेहरों का नंगा होना, धर्मशाला हो जाना, `हरी आंख बनना, गाय का गोबर करना, पीला अंधकार, चमकते हुए रंगों की चालबाजी, फिरंगी हवा, टिम-टिमाता हुआ आदमी,

भीतर तरबूज काटना, सिर तकियों पर पत्थर ढोना, भविष्य के रंगीन स्वप्नों का जोखना, चिलम भरना, आंखों में कुत्तों का भौंकना, नहले का दहला होना[313] जैसे नवीन मुहावरों को जन्म दिया है। 'पुरानी मान्यताओं, पुराने शब्दों, पुरानी कहावतों, को नये अर्थ से विभूषित करने से पाठक की अनुभूतियों को छूने में सहायता मिलती है।'[314]

धूमिल के मुहावरे मानव जीवन की भूख, बेबसी, तड़पन और मनुष्य पर हो रहे अत्याचार से कहीं अधिक जुड़े हुए हैं। उनके मुहावरे मानव-जीवन की धड़कन को पहचानने में अधिक सफल हुए हैं —

'और जहां हर चेतावनी
खतरे को टालने के बाद
एक हरी आंख बनकर रह गयी है।
'अपराध फूलना
उन्हें पानी ने मारा है।[315]

हरी आंख बनक्न बनना, अपराध फूलना, पानी से मरना आदि मुहावरे सच्ची अभिव्यक्ति देने में पूर्णतः सफल हुए हैं। क्रांति।यहां के असंग लोगों के लिए। किसी अबोध बच्चे के हाथों की जूजी है,[316] यहां जूजी शब्द का कितना स्वाभाविक प्रयोग है। 'हवा में चमकदार गोल शब्द उछाल दिया,[317] यहां, इसका अर्थ हुआ चिकनी -चुपड़ी- गोल-मटोल बातें की। इस प्रकार कहा जा सकता है कि धूमिल की मुहावरों के प्रयोग में सही पकड़ है। नयी कविता के युवा कवियों ने नये मुहावरों द्वारा भाषा को एक नई दृष्टि दी। 'सारी की सारी पीढ़ी बैसाखियां ढूंढ़ रही है[318] में आधुनिक व्यवस्था जन्य संत्रास में पूरी पीढ़ी की विकल्प

हीनता को दर्शाया गया है । अक्सर इन कवियों ने जिन मुहावरों को गढ़ा है और पुराने मुहावरों को नई अर्थवत्ता दी है वे हैं — मुंह फाड़कर हंसना, भाषण उगलना, बारूद से खेलना, बरगलाना, काली आत्मा पर सफेद कपड़ा डालना, आकाश में उछालना, अंधेरे में काला होना, शहर का दौड़ना, दाल गलना, चूल्लू भर पानी में डूबना, दांत खट्टे पड़ना, मैदान मारना, चारों खाने चित्र, हाथ धोकर पीछे पड़ना, आंखें लाल-पीली करना, लोहे के चने चबाना, बेड़ा गर्क होना, अंटी ढीली करना, द्रौपदी का चीर होना, गोबर करना, मरता क्या न करता, भगीरथ प्रयत्न, भांड़ा फूटना, चैन की सांस लेना, कमर कसना, रेत फांकना, लल्लो चप्पो करना, सिर धुनना, मुंह मसूरना, केंचुली उतारना, सातवां आसमान, हाथ धोना, जूते चटकाना, दांत किट-किटाना, पापड़ बेलना, रोटी बेलना आदि । घर-गृहस्थी चूल्हा-बटलोई से लेकर जीवन और मृत्यु तक प्रत्येक क्षेत्र से गृहीत मुहावरों को धारदार बनाने का प्रयास हुआ है । `चींटियों से त्रस्त हाथी,[३१९] में शासक वर्ग को चिंटियां और जनता को हाथी बताया गया है । मौसम का बदलना[३२०] व्यवस्था में आमूल चूल परिवर्तन की ओर संकेत है । `अन्धी लड़की की आंखों में सहवास का सुख तलाशना,[३२१] अंधी लड़की अंधी व्यवस्था है । घोड़े और घास को एक जैसी छूट,[३२२] सोये हुए जंगलों को आवाज दो[३२३] जैसे मुहावरों का प्रयोग धूमिल, जगूड़ी, विनय, कुमार विकल, चन्द्रकान्त, देवताले आदि कवियों ने किया है । इन कवियों ने भाषा को गहराई और नये सूझ-बूझ की पर्त पर लाकर छोड़ा जिसका प्रभाव हिन्दी साहित्य में अक्षुण्ण बना रहेगा ।

--

सन्दर्भ- सूची

१- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि, पहला भाग, पृष्ठ-१२४

२- द्रष्टव्य- बिल्बर, मार्शल, अर्बन लैंगुएज एण्ड रियालिटी, पृ०१४८

३- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिंतामणि, भाग-१ पृ० १८१

४- डा० रामकुमार वर्मा : साहित्यशास्त्र नवम प्रकरण, पृ० ११६

५- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, पृ० १४७

६- मम्मट- काव्यप्रकाश, प्रथम उल्लास

७- पन्त - पल्लव प्रवेश की भूमिका- पृ० १६

८- आधुनिक हिन्दी कविता- सं० ओमप्रकाश शर्मा, पृ० १७२

९- प्रिय पाठक

ये मेरे बच्चे हैं

कोई प्रतीक नहीं

और इस कविता में

मैं हूं मैं

कोई रूपक नहीं

मैं खड़ा हूं

भरा पूरा आदमी ।

--रघुवीर सहाय, एक अधेड़ भारतीय आत्मा, आधुनिक कविता,

सं० ओमप्रकाश शर्मा, पृष्ठ-१७६

१०- धर्मवीर भारती, अंधायुग, पृष्ठ-११६

११- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृ० ६

१२- वही- ,, ,, पृ०७

१३- वही- ,, ,, पृ०६

१४- धर्मवीर भारती, 'अंधायुग', पृष्ठ-१२६

१५- अज्ञेय, उत्तर प्रियदर्शी, पृ० ३२

१६- भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की लाल कनियां
पर जब खींचता है जाल को
बांध देता है सभी को साथ
छोटी-छोटी चिड़िया
मंझोले परेवे ।

- अज्ञेय, बावरा अहेरी, पृ० २६-२७

१७- सर्वेश्वर, काठ की घंटियां- पृ० ३९८,३१३

१८- सलमे-सितारों की कामवाली
नीली मखमल का खोल चढ़ा
अम्बर का बड़ा सिंदोरा उलटा
धरती पर ;
नदियों के जल में,। गिरि-तरु के शिखरों से ढर-ढरकर
सब सेन्दुर फैल गया। प्रथम बार-
इस गंवार नार के सिंगार पर
कोटर-कोटर से छिप फांकती। सखियां खिल-खिला उठीं
पीछे से आ पिय ने। चुपके से हाथ बढ़ा
माथे पर चांदी की बिंदिया चिपका दी,
लज्जा से लाल मुख। हथेलियों में छिपा
भोर भट भाग। लौट आ गयी,। माथे से छूट गिरी बेंदी
बस बड़ी रही । सर्वेश्वर-काठ की घंटिया, पृ० ६२

१९- डा० जगदीश गुप्त, हिमविद्ध, पृ० ४६

२०- साँझ के सेंदुर-लिये आकाश में
सरक आया क्षुधित बादल व्याल
लप लपाती दीर्घ-विद्युत जीभ जिसकी
तुहिन-शिखरों पर विसुध सोयी हुई
स्वप्न डूबी हर किरन को
चाट जाना चाहती है।
—डा० जगदीश गुप्त, हिमविद्ध, पृ० ४७

२१- नरेश मेहता, दूसरा सप्तक, पृ० १२५

२२- दूसरा सप्तक, नरेश मेहता, पृ० १२६ से १२८

२३- 'समय देवता' कविता, नरेश मेहता, पृ० १३४,१३५,१३७

२४- वही, पृष्ठ-१४०,१३२

२५- डा० जगदीश गुप्त, शब्द-दंश, पृष्ठ-६२

२६- भारत भूषण अग्रवाल, ओ अप्रस्तुत मन, पृष्ठ-८३

२७- अज्ञेय, उत्तर प्रियदर्शी, पृष्ठ-३५

२८- चाँद भागा जा रहा है-
मानो कोई तपक्षीण कापालिक
साध्य-साधना की जल बुझी झरी
बची खुची राख पर धीमे पैर रखता
नीरव, चपलतर गति से
चाँद भागा जा रहा है।- अज्ञेय-पूर्वा, पृष्ठ-१५१

२९- कुँवर नारायण, चक्रव्यूह, पृष्ठ-३५

३०- द्रष्टव्य- धर्मवीर भारती, अंधायुग, पृष्ठ-११८,१४२

३१- कुंवर नारायण, चक्रव्यूह, पृ० १२

३२- पूर्णमासी रात भर
पीती रही सुधा
अंक में शशि के सिमट कर
धोती रही श्यामल वदन
सुध-बुध बिसार
दिन सरीखी श्वेत चादर ढांक-
--शकुन्तला माथुर, दूसरा सप्तक, पृ०५

३३- गिरिजाकुमार माथुर, मंजीर काव्य संकलन

३४- सं० डा० नगेन्द्र, गिरिजाकुमार माथुर, पृ० ४८-४९

३५- धर्मवीर भारती, साग गीत, पृ० १३७

३६- धर्मवीर भारती, `अंधायुग`, पृ० १४

३७- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृ० ८२

३८- वही- ,, पृ० १११

३९- अज्ञेय, पूर्वा- पृ० २३१

४०- वही- ,, पृ० २२९

४१- टेर नहीं बिजली का बटन है
दाबा, और चपरासी बादल चट हाजिर हो,
मोर नहीं संकट ग्रस्त देश का नेता है,
जिसकी पुकार पर `फारेन एड` लिए
बादल विदेशी राजदूत सा प्रकट हो ।
--भारत भूषण अग्रवाल, अनुपस्थित लोग, पृ० ६०

४२- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृ० ६

४३- वही- ,, ,, पृष्ठ-२६

४४- 'पत्नी की गोद में एक छोटा सा गुलदस्ता'

-- मदन वात्स्यायन, तीसरा सप्तक, पृ० १४१

४५- बहुत बुरे लगते हैं वे दाण जब

राहु से चांद ग्रसार होता है ।

-- दुष्यन्तकुमार, सूर्य का स्वागत, पृ० ४६

४६- धर्मवीर भारती, अन्धा युग, पृ० २२

धर्मवीर भारती, वही- पृ० ७३

४७- द्रष्टव्य- धर्मवीर भारती, अंधायुग, पृ० १३,१६,३७,७६

४८- वही- पृ० ११८,१४२

४६- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिंतामणि-पहला भाग, पृ० १४५

५०- 'उपमैवानेक प्रकार वैचित्र्येणानेकालंकार बीजभूतेति प्रथमं निर्दिष्टा-' अलंकार सर्वस्व-रुय्यक, शारदा भवन काशी ।

५१- अलंकार शिरोरत्नं सर्वस्व काव्यसंपदाम् ।

उपमा कवि वंशस्य मातैवेति मतिर्मम । अलंकार शेखर, पृ० २०

५२- उपमैषा यत्र शैलूषी सम्प्राप्ता चित्रभूमिका भेदात् ।

रंजयति काव्यरंगे नृत्यन्ति तद्विदां चेत: ।।

चित्रमीमांसा, पृ० ४१, उद्धृत, अप्पय दीक्षित,

डा० नरेन्द्रनाथ शर्मा, पृ० ५२

५३- सादृश्यं सुन्दरं वाक्यार्थोपस्कारकम् उपमालंकृतिः ।
सौन्दर्यं च चमत्कृत्याधायक तत्वम् ।
रसगंगाधर

५४- Harbertread, in English Prose
Style admirably described mataphore as the swift
illumination of an equirallence.
-G. Whally-Poetic Process-P. 145

५५- जे० एम० मरे, द, प्रौबलम आफ स्टाइल,

५६- डा० विजयेन्द्र स्नातक, हिन्दी साहित्य कोश, पृ० ४३

५७- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ६३६

५८- चांदनी चंदन सदृश हम क्यों लिखें ?
मुख हमें कमलों सरीखा क्यों दिखे
हम लिखेंगे चांदनी उस रूपये सी है
जिसमें चमक है पर खनक गायब है ।
- अजितकुमार, अकेले कंठ की पुकार, पृ० २७

५९- द्रष्टव्य- तीसरा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृष्ठ-१४१-४२

६०- सर्वेश्वर, काठ की घंटियां, पृष्ठ-३०१

६१- अज्ञेय, हरीघास पर क्षण भर, पृष्ठ-५७

६२- कविता में जाने से पहले
मैं आपसे पूछता हूं
जब इससे न चोली बन सकती है,
न चोंगा
तब आपै कहो —

इस ससुरी कविता को
जंगल से जनता तक
ढोने से क्या होगा ?
आपै जवाब दो
मैं इसका क्या करूं ?
तितली के पंखों में पटाखा बांधकर
भाषा के हलके में
कौन सा गुल खिला दूं ?
धूमिल- संसद से सड़क तक, मैं पृ० ६७

६३- धूमिल- वही- पृष्ठ-७०
६४- मुक्ति बोध, चांद का मुंह टेढ़ा है
६५- धर्मवीर भारती, ठण्डा लोहा, पृष्ठ-१२
६६- अज्ञेय, हरीघास पर क्षण भर, पृष्ठ-५३
६७- अज्ञेय, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-१६
६८- सुन्दरियों के गोल वदन
लिपटे गुलाल से
ज्यों सूरज पर संध्या बादल
- अज्ञेय, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-१६
६६- धर्मवीर भारती, ठण्डा लोहा, पृष्ठ-८२
७०- जगदीश गुप्त, शब्द दंश, पृष्ठ-६६
७१- द्रौपदी-सी चीखती है नारियां निर्वस्त्र
जिनके चीर दु:शासन कहीं पर
फेंक आया खींचकर ।
- हरिनारायण व्यास, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-७१

७२- धर्मवीर भारती, 'दूसरा सप्तक', पृष्ठ-१९८

७३- धर्मवीर भारती, ठण्डा लोहा, पृष्ठ-१३

७४- धूप चंदन रेख सी
सल्मा सितारा सांझ होगी
चांदनी होगी न तपसिन
दिन बना होगा न योगी ।
- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृष्ठ-५२

७५- गिरिजाकुमार, धूप के धान, पृष्ठ-२३

७६- नरेश मेहता, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-११६

७७- नरेश मेहता, मेरा समर्पित एकांत, पृष्ठ-२६-२७

७८- तुम
थर्मामीटर के पारे-सी
चुपचाप जिसमें भावनाएं चढ़ती उतरती हैं ।

७९- - सर्वेश्वर, काठ की घंटियां, पृष्ठ-३

८०- नयी कविता, अंक-१, जगदीश गुप्त, पृष्ठ-६१

८१- प्यार का नाम लेते ही
बिजली के स्टोव-सी
जो एकदम सुर्ख हो जाती है ।
- सर्वेश्वर- काठ की घंटियां, पृष्ठ-३०१

८२- भारत भूषण अग्रवाल, ओ अप्रस्तुत मन, पृष्ठ-९६

८३- धूप -
- मांकी हंसी के प्रतिविम्ब -सी
शिशु वदन पर हुई भासित ।
- अज्ञेय, इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये, पृष्ठ-८३

८४- गिरिजाकुमार माथुर, शिला पंख चमकीले, पृष्ठ-४
८५- रघुवीर सहाय, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-१५३
८६- श्याम आकाश में संकेत-भाषा -सी तारों की आंखें
चम-चमा रही है। मेरा दिल ढिबरी-सा टिम-टिमा रहा है ।
- मुक्ति बोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-२६१

८७- वही- ,, ,,
८८- द्रष्टव्य- डा० शंकरदेव अवतरे, हिन्दी साहित्य में काव्य रूपों के विविध प्रयोग, पृष्ठ-२५
८९- डा० कुमार विमल, सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, पृष्ठ-२०१
९०- Colridge-quoted by Richerds in the book.
Colridge on Immgination.
९१- बच्चूलाल अवस्थी, `ध्वनि सिद्धान्त और तुलनीय साहित्य चिन्तन ।
पृष्ठ-३८३
९२- एच कुम्बे, लिटरेचर एण्ड क्रिटिसिज्म, पृष्ठ-४६
९३- सं० नंददुलारे ~~बाजपेयी~~ वाजपेयी, आलोचना, संपादकीय, अप्रैल१९५८
पूर्णाङ्क-२६, पृष्ठ-३
९४- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिंतामणि, भाग-२ पृष्ठ-१२१
९५- स्टीफेन जे ब्राउन, वर्ल्ड आफ इमैजरी, पृष्ठ-१,२
९६- रामदहिन मिश्र, काव्य में अप्रस्तुत योजना, पृष्ठ-४५

९७- दि सैक्रेड वुड, टी० एस० इलियट, पृष्ठ-१२०

९८- कैलाश वाजपेयी, आधुनिक कविता में शिल्प, पृष्ठ-६६

९९- शब्द चित्रं वाच्य चित्रं व्यंग्यंत्ववरं स्मृतम् ।

- मम्मट- काव्य प्रकाश, प्रथम उल्लास

१००- विनिर्गतं मानदमात्म मन्दिराद् भवत्युपश्रुत्य महच्छयापि यम ।

ससंभ्रमेन्द्र द्रुत पातितार्गला निमीलिताक्षीव भियामरावती ।।

- मम्मट-काव्य प्रकाश: प्रथम उल्लास :

१०१- डा० जगदीश गुप्त, नयी कविता स्वरूप और समस्यायें,पृ०-४४

१०२- सी०डी० लीविस, `द पोयटिक इमेज, पृष्ठ-१८

१०३- The idea that imagery is at the core of the Poem, that a Poem may itself be an image compose from a multiplicity of images did not begin to have any wide official currency till the Romantic movement.
The Poetic image, Page -18

१०४- Imagin verse are not mere decoration, but the very essence of an intutive language-speculation'
-T.E. Hume, Page -135

१०५- शेक्सपीयर्स, इमेजरी एण्ड ह्वाट इट टैल्स अस`, पृष्ठ-५

१०६- Colridge quoted by Richards in the book ~~xk~~ Colridge on Imagination.

१०७- केदारनाथ सिंह, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-१९७

१०८- सी०डी० लेविस, द पोयटिक इमेज, पृष्ठ-१८

१०९- वही- ,, ,, पृष्ठ-१९

११०- सी०डी० डे लेविस, द पोयटिक इमेज, पृष्ठ-१००
१११- वही- ,, ,, पृष्ठ-१०३
११२- डा० शम्भूनाथ चतुर्वेदी, नया हिन्दी काव्य और विवेचन, पृ०३३८
११३- डा० कैलाश वाजपेयी, आधुनिक हिन्दी कविता में शिल्प, पृष्ठ-८१
११४- लखौरी ब्रजनंदन प्रसाद, काव्यात्मक बिम्ब, पृष्ठ-७७ ।
११५- शमशेर, संपादक- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, मलयज(डायरी के अंश,पृ०१३५
११६- द्रष्टव्य : मुक्ति बोध का 'शमशेर : मेरी दृष्टि में-
लेख' 'शमशेर-संपादक : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना,मलयज)पृष्ठ-१२-१३
११७- विवेचना संकलन-१ 'संयोजक उपाराव' पृष्ठ-५३,
११८- 'यह पगडण्डी
चली लजीली
इधर- उधर, अटपटी चाल से नीचे को,पर
वहां पहुंच कर घाटी में- खिल खिला उठी ।
कुसुमित उपत्यका ।
- अज्ञेय- अरी ओ करुणा प्रभामय, पृष्ठ-६५
११९- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृष्ठ-८६
१२०- मुक्ति बोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-३७
१२१- वही- ,, ,, पृष्ठ-७६
१२२- लक्ष्मीकान्त वर्मा, अतुकान्त, पृष्ठ-१६६
१२३- नैतिकता, मर्यादा, अनाशक्ति,कृष्णार्पण।ये सब हैं अन्धी
प्रवृत्तियों की पोशाकें। जिनमें फटे कपड़ों की आंखें सिली रहती हैं ।
'अन्धा युग', पृष्ठ-२३

१२४- गुप्तचर चेहरे। हजारों की खाली निगाहों से
फांक कर लौट गये। आत्मजयी, पृष्ठ-२५

१२५- ठण्डे नक्षत्रों सी आंखें, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-२१०
१२६- भारती, अंधायुग, पृष्ठ-५२
१२७- मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-४४
१२८- शमशेर, ~~कर~~ कुछ और कविताएं, पृष्ठ-७५

१२९- 'तब कुंदों के तार खिंचे- खिंचे थे,। राग बंधा-बंधा था ।
प्यास उंगलियों में विकल थी- कि मेघ गरजे। और मोर दूर और
कई दिशाओं से। बोलने लगे पीयुक्ष ! पीयुक्ष ! उनकी हीरे नीलम
की गर्दनें बिजलियों की तरह हरियाली के आगे चमक रही थीं।
कहां छिपा हुआ बहता पानी। बोल रहा था अपने स्पष्ट मधुर।
प्रवाहित बोल ।
- शमशेर- कुछ कविताएं, पृष्ठ-१२

१३०- शमशेर- कुछ और कविताएं- पृष्ठ-५२
१३१- अज्ञेय, बावरा अहेरी, पृष्ठ-३५
१३२- शमशेर, कुछ और कविताएं, पृष्ठ-६
१३३- मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृ ष्ठ-१६६
१३४- कुंवर नारायण, आत्मजयी, पृष्ठ-५७
१३५- तपती जिन्दगी की उदास दोपहरी में। तुम खस की खुशबू की तरह
कमरे में आयी थी ।

- नरेश, नकेन के प्रपद्य, पृष्ठ-१०८

१३६- रघुवीर सहाय, आत्म हत्या के विरुद्ध, पृष्ठ-४७

१३७- जगदीश गुप्त- युग्म-

१३८- विजयदेव नारायण साही, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-२८८

१३९- गिरिजा कुमार माथुर, धूप के धान, पृष्ठ-७३

१४०- धर्मवीर भारती, ठण्डा लोहा, पृष्ठ-६७

१४१- पद्मधर त्रिपाठी, नयी कविता, अंक-७, पृष्ठ-१०९-११०

१४२- अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृष्ठ-६४

१४३- नरेश मेहता, बोलने दो चीड़ को, पृष्ठ-६४

१४४- मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-२६१

१४५- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, काठ की घंटियां, पृष्ठ-२७७

१४६- जहां लोग खिलते थे कविताएं
वहां खड़े हो गये कारखाने -
- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, चीजों को देखकर, पृष्ठ-८७

१४७- अज्ञेय, अरी ओर करुणा प्रभामय, पृष्ठ-४५

१४८- सर्वेश्वर, काठ की घंटियां, पृष्ठ-३००

१४९- मुक्तिबोध- चांद का मुंह टेढ़ा है ।

१५०- मदन वात्स्यायन, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-१३४

१५१- वीरेन्द्रकुमार जैन, युग चेतना, जून ५७, पृष्ठ-२७

१५२- मैं जिसे मिटाने को सहसा
चल पड़ा दूर पर रहा पास
तुम बिन्दु और तुम केन्द्र रही
यह प्यार हमारा बना व्यास
मैं वृत्त-वृत्त बन नाच रहा
तुम बिन्दु-बिन्दु बन रही पास ।
- नरेश, नकेन के प्रपद्य, पृष्ठ-७२

१५३- प्रयाग नारायण त्रिपाठी, तीसरा सप्तक, पृष्ठ-५५

१५४- डा० शिवकुमार मिश्र, आधुनिक कविता और युगदृष्टि-पृष्ठ-६०

१५५- अज्ञेय, इत्यलम्, पृष्ठ-१५७

१५६- रघुवीर सहाय- सीढ़ियों पर धूप, पृष्ठ-१७०

१५७- अज्ञेय, हरी घास पर क्षण भर, पृष्ठ-४८

१५८- अज्ञेय- इत्यलम्, पृष्ठ-६४

१५९- क.ख.ग.-६, पृष्ठ-५७

१६०- केदारनाथ सिंह, आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब विधान, पृष्ठ-३१५,३२१

१६१- 'झरोखों में से बहती हवा का एक झोंका। इतराता आता है और इतिहास के पन्नों को उड़ाता चला जाता है। दिवा चक्रवाल से सिमट चांदनी। झरोखे से झरती हुई। बिल्लौर सी जम जाती है। जमी हुई चांदनी के झलमलाते ताजमहल के नीचे। बागड़ियों के झोपड़ों के छप्पर उभर जाते हैं जिनके स्वर के आरी सरीखे किनारे मानों आंखों की कोरों को चीर जाते हैं - । और छप्पर की छत पर बैठी एक भैंस पागुर कर रही है। इन्द्रधनुष रौंदे हुए, पृष्ठ-३१

१६२- चांद का मुंह टेढ़ा है- पृष्ठ-४८ से ५५ तक।

१६३- वही- ,, ,, पृष्ठ-२८८

१६४- नामवर सिंह, कविता के नये प्रतिमान, पृष्ठ-१३४

१६५- संक्रान्त - कैलाश वाजपेयी, पृष्ठ-१

१६६- एक नन्दी डकारा है पूरे वेग से और भाग गया है जंगल की ओर।
शिवलिंगों की पूजा करते- करते गृहणियां नग्न हो गयी हैं ।
और अपने शरीर को चक्रवात सा घूमने दे रही हैं
कठोर शिला के शीर्ष से सटकर ।
- जगदीश चतुर्वेदी, इतिहास हन्ता, पृष्ठ-१७

१६७- धर्मवीर भारती, अंधायुग, पृष्ठ-६०
१६८- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृष्ठ-८०
१६९- मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-११
१७०- समकालीन कविता में मिथक- अश्विनीक पाराशर, पृष्ठ-४६, समकालीन हिन्दी कविता संवाद, संपादक- डा० विनय अश्विनी पाराशर ।
१७१- अज्ञेय, भवन्ती, पृष्ठ-९७
१७२-

१७३- अज्ञेय- भवन्ती, पृष्ठ-१००
जाने कितने कारावासी वसुदेव
स्वयं अपने कर में शिशु आत्मज से
बरसाती रातों में निकले
धंस रहे अन्धेरे जंगल में
विक्षुब्ध पुर में यमुना के ।
अति दूर अरे उस नंदग्राम की ओर चले
जाने किसके डर से स्थानान्तरित कर रहे वे
जीवन के आत्मज सत्यों को ।
मुक्तिबोध : चांद का मुंह टेढ़ा है , पृष्ठ-५३

१७४- दुष्यन्त कुमार, सूर्य का स्वागत, पृष्ठ-११

१७५- जब जगत को चाहिए फुलवारियां
हो रही तब युद्ध की तैयारियां
फिर धरा सीता सतायी जा रही
फिर असुर संस्कृति समायी जा रही ।

— गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृष्ठ-६२

१७६- अज्ञेय- दूसरा सप्तक, पृष्ठ-७१

१७७- रख दिये तुमने नजर में बादलों को साधकर
आज माथे पर सरल संगीत से निर्मित अधर
आरती के दीपकों की झिलमिलाती छांह में
बांसुरी रखी हुई ज्यों भागवत के पृष्ठ पर

-- धर्मवीर भारती, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-१६५

१७८- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृष्ठ-१

१७९- वही- ,, ,, पृष्ठ-२३

१८०- गिरिजाकुमार माथुर, शिला पंख, चमकीले, पृष्ठ-६

१८१- नरेश मेहता, दूसरा सप्तक, पृष्ठ-१२६

१८२- वही- मेरा समर्पित एकांत- पृष्ठ-२६-२७

१८३- धीमा कर दो प्रकाश
मोम की दीवारें
गल न जायें। सपनों के लाक्षागृह
जल न जाएं- कुंवरनारायण , तीसरा सप्तक, पृष्ठ-२६१

१८४- नरेश मेहता, संशय की एक रात, पृष्ठ-३८

१८५- एक कण्ठ विषपायी- आभार कथा, पृष्ठ-२

१८६- कुंवर नारायण, आत्मजयी, भूमिका-पृष्ठ-७

१८७- एक स्तर पर। विद्वेष, क्रूरता, हिंसा, बेईमानी सब कुछ इतना सम्भव है कि स्वाभाविक लगे- और उसी स्तर पर हममें से हर एक जी सकता है। पागलों की तरह। एक दूसरे से त्रस्त पीड़ित और अपमानित

लेकिन मैं रीता गया आत्मा को व्यय करके
बदले में केवल एक कुंठा संचित करके

-- कुंवरनारायण, आत्मजयी, पृष्ठ-७ और १८

१८८- वही- पृष्ठ-१०-११

१८९- वही- चक्रव्यूह, पृष्ठ-१०३

१९०- 'मुझे याद आते हैं- ।भयभीत आंखों के हंस वह घाव भरे कबूतर। मुझे याद आते हैं मेरे लोग उनके सब हृदय-रोग। घुप्प अंधेरे घर पीली-पीली चिता के अंगारों जैसे पर मुझे याद आती है लाल-लाल जलती हुई ढिबरी । मुझे याद आता है मेरा प्यारा-प्यारा देश लाल-लाल सुनहला आवेश ।

- मुक्तिबोध- चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ-१२४

१९१- नयी कविता - अंक ५-६,पृष्ठ-१९८,सं० जगदीश गुप्त ।

१९२- अतुकान्त, पृष्ठ-१२

१९३- वही, पृष्ठ-१८,११३

१९४- विदुर-फुलस फुलस कर। गिर रही हैं वनस्पतियां

\+ \+ \+ \+ \+

व्यास-सूरज बुझ जायेगा। धरा बंजर हो जायेगी ।

- धर्मवीर भारती- अन्धा युग, पृष्ठ-९३,९६

१९५- धर्मवीर भारती, कनुप्रिया, पृष्ठ-४८

१९६- इस व्यवस्था की परिधि से दूर बैठा
है अटल ध्रुव-सा अकेला आज-रथ का
पांचवां पहिया, छठा पति द्रौपदी का,
जानते सप्ताह कैलेण्डर जगत के
और तू है आठवें दिन सा निरर्थक
--आधुनिक कवि, भाग-१३, पृष्ठ-१४

१९७- शमशेर, कुछ कवितायें, पृष्ठ-क्रमश: २५,३३,३४,३५,४५

१९८- मुक्ति बोध : चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ क्रमश: ८ से २०८ तक

१९९- रघुवीर सहाय, सीढ़ियों पर धूप, पृष्ठ-१९८

२००- बालकृष्ण राव- आधुनिक कवि भाग-१३,पृष्ठ-९५

२०१- वही- ,, ,, ,, पृष्ठ-१०८

२०२- भारती सात गीत वर्ष, पृष्ठ-६०,७९

२०३- धर्मवीर भारती, कनुप्रिया, पृष्ठ-७५

२०४- विजयदेवनारायण साही, -मछली घर, पृष्ठ क्रमश: २८ से ११४

२०५- लक्ष्मीकान्त वर्मा- अतुकान्त, पृष्ठ क्रमश: ३१ से ११८ तक

२०६- गिरिजाकुमार माथुर, शिलापंख चमकीले, पृष्ठ क्रमश: ६,२२,३०,४८,
७३,७७,७९,८३

२०७- कुंवर नारायण, परिवेश, हम तुम, पृष्ठ-९४

२०८- चक्रव्यूह, पृष्ठ-१०३,१२७

२०९- नयी कविता, अंक-२, पृष्ठ-६७,९२ सं० जगदीश गुप्त ।

२१०- प्रो० श्रीपाल सिंह 'क्षेम' छायावाद के गौरव चिन्ह, पृष्ठ-२२६

२११- नगेन्द्रनाथ मु वसु, विश्व कोश भाग-१४, पृ० ५४६

२१२- अमर कोश श्लोक संख्या-४७०, मनुष्य वर्ग सम्पादक- ज्ञान मण्डली-काशी
अंग प्रतीको वय वो पवनो थकलेवरम

२१३- ऋग्वेद-१।१८५।६
२१४- कैलाश वाजपेयी, आधुनिक हिंदी कविता में शिल्प, पृ० ६६
२१५- साप्ताहिक हिन्दुस्तान,२१, अगस्त १६५५ में प्रकाशित प्रतीक
योजना लेख ।
२१६- काव्य-बन्धास्तु कर्तव्या: षट् त्रिंशल्लक्षणान्विता:
नाट्य शास्त्र, १६।१६६
२१७- हृदयस्थस्य भावस्य गूढार्थस्य विभावकम् ।
अन्यापदेशै: कथनं मनोरथ इति स्मृत: ।।
नाट्यशास्त्र- १७।३६
२१८- संकेतो गृहस्यते जातौ गुण द्रव्य क्रियासु च ।
विश्वनाथ साहित्य दर्पण, द्वितीय परिच्छेद :४,पृष्ठ-२७
२१६- डी०ई०एस मैक्सवेल, द पोयट्री आफ टी०एस० इलियट,पृ०४८
२२०- Emcy lopedia Britanica,Vol.21,Page-700
२२१- Webester quoted by Tindall, The litrary symbal,P.6
२२२- G.Whalley, Poetic Prcess,Page-166.
२२३- डा० रामअवध द्विवेदी, साहित्य रूप, पृष्ठ-२७२
२२४- हिन्दी साहित्य कोश, भाग-१ पृष्ठ-५१५
२२५- डा० सुधीन्द्र, हिन्दी कविता में युगान्तर, पृ० ३६८
२२६- डा० शंकरदेव अवतरे, हिन्दी साहित्य में काव्य रूपों के प्रयोग,पृ०२५
२२७- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,चिंतामणि भाग-२ पृ०१२१
२२८- डा० हरदयाल, आधुनिक हिन्दी कविता का अभिव्यंजना शिल्प,पृ०७
२२६- दुष्यन्तु कुमार, सूर्य का स्वागत, पृ० ११
२३०- वही- पृ० १२

२३१- निकष-१ में प्रकाशित मलयज की कविता, हम स्वप्नदर्शी हैं।

२३२- मछली घर - विजयदेव नारायण साही, पृ० ४१-४२

२३३- तार सप्तक, संपादक-अज्ञेय, पृ० २१०

२३४- चक्रव्यूह, कुंवर नारायण ,पृ० १०७

२३५- धूप के धान, गिरिजाकुमार माथुर, पृ० ११

२३६- शिला पंख चमकीले, गिरिजाकुमार माथुर, पृ० ६

२३७- सूर्य का स्वागत, दुष्यन्तकुमार, पृ० ८२

२३८- अतुकान्त, लक्ष्मीकान्त वर्मा, पृ० १८,२१

२३९- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृ० २३

२४०- नरेश मेहता, दूसरा सप्तक, 'समय-देवता', पृ० १३२

२४१- अज्ञेय, बावरा अहेरी, पृ० ७,६,२१,२३,३६,४२

२४२- अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृ० २६

२४३- शमशेर- कुछ कविताएं, पृष्ठ क्रमश: २५ से ४५ तक ।

२४४- कुछ और कविताएं- शमशेर, पृ० ३७५

२४५- मुक्ति बोध, चांद का मुंह टेढ़ा है- पृ० ८ से ४६ तक ।

२४६- विजय देव नारायण साही, मछली घर, पृ० क्रमश: २८ से १४

२४७- गिरिजाकुमार माथुर, शिला पंख चमकीले, पृ० क्रमश: ६ से ८३

२४८- नयी कविता, अंक-५,६ पृष्ठ-क्रमश: २१४,२१५

२४९- नयी कविता, अंक-८ पृष्ठ-१७०

२५०- नरेश मेहता, दूसरा सप्तक, पृ० १२६

२५१- सांप तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना। भी तुम्हें नहीं आया
एक बात पूछूं उत्तर दोगे ?
तब कैसे सीखा डसना। विष कहां पाया ?
- अज्ञेय, इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये, पृ० २६

२५२- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, काठ की घंटियां, पृ० ३६३

२५३- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृ० ३६

२५४- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, काठ की घंटियां, पृ० ३७०

२५५- भारत भूषण अग्रवाल, ओ अप्रस्तुत मन, पृ० ५६-६०

२५६- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, काठ की घंटियां, पृ० ३००

२५७- अज्ञेय, हरी घास पर क्षण भर, पृष्ठ-४८

२५८- इन्दु जैन, चौंसठ कविताएं, पृष्ठ-३८

२५९- अज्ञेय, इत्यलम, पृष्ठ-१६५

२६०- अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृ० ६०

२६१- रघुवीर सहाय, सीढ़ियों पर धूप में, पृष्ठ-१४१

२६२- धर्मवीर भारती, अंधा युग, पृ० ११,२७,८६,१२२

२६३- एक पाखण्ड। का सिर फट जाता है और पैदा होते हैं
असंख्य रीछ, पालतू कुत्ते, चिमगादड़ और बन-बिलाव ।
- निषेध, संपादक-जगदीश चतुर्वेदी, पृ० २१-२२

२६४- अजगर को गुफा में घुसने दो
सब ठीक हो जायेगा ।
- लीलाधर जगूड़ी, नाटक जारी है, पृष्ठ-६३

२६५- भेड़ियों को आदमियों के वस्त्र पहनाकर निरस्त्र।उनसे भाई-चारा
बढ़ाना शुरू कर दिया और यही मुझसे गलती हो गयी ।
- सुरेन्द्र तिवारी, जूझते हुए पश्चाताप, पृष्ठ-३८

२६६- हर सुबह देखता हूं। लम्बी चिमनियों का मोटा धुआं और कौवों
की कांव-कांव। घेर लेती है पूर्व की ड्योढ़ी को। फिर छवि भी
ठिठुरते तालाब की। घेराबन्दी तोड़- उग आता है आग का
गोला ।
श्री हर्ष विचार कविता की भूमिका, प्रतिबंध, पृ० १५२

२६७- संसद भवन में शहद का छत्ता लगा है। जिसकी मक्खियां फूलों से नहीं। घावों से मधु चूसती हैं। और रानी मक्खी कुछ नहीं करती। बस बिस्कीट पहनती हैं।

- भारतभूषण अग्रवाल, एक उठा हुआ हाथ, पृष्ठ-५४

२६८- प्रारम्भ, श्यामपरमार, सं० जगदीश चतुर्वेदी, पृ० १३५

२६९- चाकू से खेलते हुए , सौमिक मोहन, पृ० १३

२७०- निषेध, सं० जगदीश चतुर्वेदी, पृष्ठ-३७

२७१- Every symbal opens up a level of reality for which non symbolic speaking is inadeauate. Quoted, Ivid, Page-118

२७२- हृदयस्थस्य भावस्य गूढार्थस्य विभावकम् ।
अन्यापदेशैः कथनं मनोरथ इति स्मृतः
भरत मुनि : नाट्यशास्त्र, १७।३६

२७३- मुख्यार्थ बाधे तद्योगे रूढ़ितो थ प्रयोजनात् ।
अन्यो र्थो लक्ष्यते यत् सा लक्षणारोपिता क्रिया ।।
- मम्मट, काव्य प्रकाश द्वितीय उल्लास, पृ० सं० ६

२७४- द्रष्टव्य- शोभाकर मिश्र, अलंकार रत्नाकर, उद्धृत
राममूर्ति त्रिपाठी, लक्षणा और उसका हिन्दी काव्य में प्रसार, वाराणसी, सं० २०३३ वि० पृ० ४४४

२७५- डा० नगेन्द्र - नयी समीक्षा नये संदर्भ-दिल्ली-१९७०, पृ० २८

२७६- 'उपचारो नामात्यन्तं विशकलितयोः शब्दयोः सादृश्यातिशय महिम्ना भेद प्रतीति स्थगन मात्रं यथा अग्नि माणव कयोः ।
- विश्वनाथ - साहित्य दर्पण, द्वितीय परिच्छेद, पृ० २७

२७७- रामदहिन मिश्र, काव्य में अप्रस्तुत योजना, पटना-२००५ वि०, पृ० ५०

२७८- मुक्तिबोध- चांद का मुंह टेढ़ा है-पृष्ठ-

२७९- निषेध, सं० जगदीश चतुर्वेदी, प्रजातंत्र के बुखार में, चन्द्रकांत देवताले, पृष्ठ-५२,५६,७०

२८०- सर्वेश्वर- दूसरा सप्तक, संपादक-अज्ञेय, पृ० २१६

२८१- धूमिल, संसद से सड़क तक, पृ० १४

२८२- निषेध, सं० जगदीश चतुर्वेदी, प्रजातंत्र के बुखार में - चन्द्रकान्त देवताले, पृ० ४६

२८३- रघुवीर सहाय, आत्महत्या के विरुद्ध, पृ० १३

२८४- धूमिल- संसद से सड़क तक, पृष्ठ-२७,५१

२८५- सर्वेश्वर, कविताएं, पृष्ठ-९,१५६

२८६- निषेध, सं० जगदीश चतुर्वेदी, पृष्ठ-२३

२८७- भेदाविमौ च सादृश्यात् सम्बन्धान्तरस्तथा-
गौणौ शुद्धौ च विज्ञेयौ, मम्मट : काव्य प्रकाश, द्वितीय उल्लास,
श्लोक सं० १६

२८८- विषयिणा अनिगीर्णस्य विषयस्य तेनैव सह
तादात्म्य प्रति कृत्सारोपा इयमेव रूपकालंकारस्य बीजम् ।
- विश्वनाथ, सा०द० द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठ-५९

२८९- अलंकार सर्वस्व- रूय्यक, उद्धृत सा०द०-२ प० पृ० ५९

२९०- अपृथंग निर्दिष्टि विषये विष्यय भेदो ध्यवसानम् ।
- रस गंगाधर: द्वितीय आनन ।

२९१- तदेवं विषयस्य नीगीर्य माणत्वाद् विषयिणश्च निश्चयात्
सिद्धमध्यवसाय मूलत्वमस्या(उत्प्रेक्षाया इति यथोक्तमेव,
उत्प्रेक्षालक्षणं पर्यालोचिताभिधानम्।
जयरथ- अलंकार सर्वस्व विमर्शिनी, उद्धृत सा०द०-२प० पृष्ठ-५९

२९२- गौणी प्रयोजनवती सारोपा चन्द्र आननम् ।
गौर्वाह्नीक इति ज्ञेया रूपकालंकृतौ हिता ।।
सैव साध्यवसाना तु गौरेवायमिति स्फुटा ।
चन्द्र एवेदमित्यादौ रूपकातिशयोक्ति कृतत् ।।
प्रयोजनवती शुद्धा सारोपायुर्धृतं त्विति ।
सैव साध्यवसाना चेदायुरेव मित्यपि ।।
उन्मादो मृत्युराप्तोक्ति रेवामृत मिति क्रमात् ।
हेत्वलंकार बोधायोप युक्तास्ति द्विधाप्यसौ ।।
अथ प्रयोजनवती विरुद्धा धन्य एव स: ।

\+ \+ \+

व्याजस्तुतिरलंकार: सिध्यत्यस्या: प्रसादत: ।
प्रयोजनवती तद्देषा लक्षित लक्षणा ।।

\- श्रीमच्च्युतराय, साहित्य सार, ऐरावत रत्न, परिच्छेद-२

२९३- तस्य मुष्णाति सौभाग्यं तस्य कान्तिं विलुम्पति ।
तेन सार्धं विगृह्णाति तुलां तेनाधि रोहति ।।
तत्पदव्यां पदं धत्ते तस्य कक्षां विगाहते ।
तमन्वेत्यनुबध्नाति तच्छीलं तन्निषेधति ।।
तस्य चानुकरोति शब्दा: सादृश्य सूचका : ।।
-आचार्य दण्डी, काव्यादर्श, व्याख्याकार धर्मेन्द्र गुप्त, द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठ-१११ श्लोक सं० ५७ से ६४ ।

२९४- भवानीप्रसाद मिश्र- अंधेरी कविताएं शरीर और सपने, पृष्ठ-४५

२९५- अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृष्ठ-१६, १७, १४६, १५६ और १६०

२९६- अज्ञेय, इन्द्रधनुष रौंदे हुए, पृष्ठ-३८,५१,३२

२९७- वही- हरी घास पर क्षण भर, पृष्ठ-३९

२९८- अज्ञेय- बावरा अहेरी, पृष्ठ-१२,३१,३५,५१

२९९- सर्वेश्वर- तीसरा सप्तक, पृष्ठ-३७०,६६९,३६८,३६६,२६२

३००- सर्वेश्वर- काठ की घंटियां, पृष्ठ-४०३,२६८,३२६,३२८

३०१- सर्वेश्वर, कविताएं-२, एक सूनी नाव, पृष्ठ-९८

३०२- सर्वेश्वर- कविताएं-२, एक सूनी नाव-पृष्ठ-१४,२१,७८,८६,१०२,
१४३,१५७,१३५,२०५

३०३- दुष्यन्तकुमार, सूर्य का स्वागत, पृ० ५७,२१,५६

३०४- गिरिजाकुमार माथुर, धूप के धान, पृ० ३०,३१

३०५- भारत भूषण अग्रवाल, अनुपस्थित लोग, पृ० १८,१९,३३,४५,४६,
२८,३१

३०६- अवधेश कुमार , चौथा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृ० ४८,३०

३०७- नंद राजकुमार कुम्भज, चौथा सप्तक, सं० अज्ञेय-पृ० ९३

३०८- नंदकिशोर आचार्य, चौथा सप्तक, सं० अज्ञेय, पृ० १५०,१५१

३०९- सुमन राजे, चौथा सप्तक, संपादक- अज्ञेय, पृष्ठ-१९७

३१०- कमलेश : पहचान : जगत्कारा, पृ० १९०

३११- विचार कविता की भूमिका प्रार्थना में झुके हुए शब्दों का वर्तमान
पृष्ठ-१९०

३१२- अकथ- डा० एस० महर्षि, महावीर दधीचि, पृष्ठ-१३

३१३- जगूड़ी, नाटक जारी है, टेलीफोन पर, पृ० ६५

३१४- धूमिल- संसद से सड़क तक, पृ० ९,१०,१२,१४,१५,१७,२१,२७,३०,
३३,३४,५१,५९,८१,१३६

३१५- हरिनारायण व्यास, दूसरा सप्तक, वक्तव्य,पृ० ६१

३१६- धूमिल- संसद से सड़क तक, पृष्ठ-१४

३१७- वही- पृष्ठ-२०

३१८- वही- पृष्ठ-४८

३१९- अजामिल, त्रयी- । सं० जगदीश गुप्त, १९७४,पृष्ठ-४९

३२०- नरेन्द्र मोहन, इस हादसे में, पृष्ठ-५४

३२१- बलदेववंशी, उपनगर में वापसी, पृष्ठ-३२

३२२- दुष्यन्त कुमार, साये में धूप, पृष्ठ-६५

३२३- धूमिल, संसद से सड़क तक, पृष्ठ-२५

३२४- लीलाधर जगूड़ी, बची हुई पृथ्वी, पृष्ठ-५२

३२५- विनय, दूसरा राग, पृष्ठ-१३